सुधांजलि

SUDHANJALI

इंदिरा देवी
दिलीपकुमार राय

INDIRA DEVI
DILIP KUMAR ROY

To

9/36

Sri Ma Anandamayi
Ashram Library.
Varanasi

Shrinath [illegible] 19th. Sept. 58
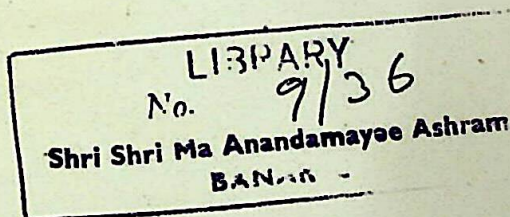
सुधांजलि
SUDHANJALI

इंदिरा देवी
श्री दिलीपकुमार राय

INDIRA DEVI
DILIP KUMAR ROY

भजनावलि

साड़े तिन रुपया

Rs. 3·50

HARI KRISHNA MANDIR, GANESH KHIND ROAD,
POONA 5.

उत्सर्ग

दादाके कमलचरणोंमें

लो प्रणाम सद्गुरू। प्रणाम लो हमारा।
योगी, शिल्पि, तपस्वि, अरविंदका दुलहारा!
जय गुरू, जय सद्गुरू, जयकार हो तुम्हारा!
लाख लाख वंदना प्रणाम लो हमारा!

श्याम नाम कि, गुणधाम, तू ने धुन लगाई!
मधुर कंठ तेरे संत कोयलिया गाई!
सुनके झूमे गगन तारे झूमे जगत सारा!
लो प्रणाम सद्गुरू! प्रणाम लो हमारा!

प्रेम शकति अतुल भकति तेरि है नियारी!
महात्यागि, हे वैरागि, प्रेमि, पीतधारी!
तू गोपालका दुलाल, देवरूप प्यारा!
लो प्रणाम सद्गुरू! प्रणाम लो हमारा!

तू दयाल, भकतपाल, सत्यलोकवासी!
तू दिलीप अमर दीप मोहतापनाशी!
लाख बरस दादा जीओ, धन जनम तुम्हारा!
लो प्रणाम सद्गुरू, प्रणाम लो हमारा!

जानुयारि २२, १९५८ —इंदिरा

उत्सर्ग

श्री दिलीपकुमार राय,
गुरुदेवेषु,

घड़ी शुभ जनमदिनकि फिर तेरि आई।
कवी भक्त शिल्पी गुणी हो बधाई।
न ली फूलमाला, न पूजा कि थाली :
गुरुवंदनाको चली हाथ खाली।
दिया कुछ न मैं ने कि—हलकी थि झोली :
"जो है कुछ है उसका"—हृदयवीणा बोली।

गगन ने तुम्हें हैं दिये दो सितारे।
हरीप्रेममें होंगे आँसू तुम्हारे।
दि सागर ने गहराइ, तूफ़ाँ ने शक्ती,
अटलता दि पर्वत ने, अंबर ने मुक्ती।
दिया कुछ पवन ने न—हलकी थि झोली :
"सरलता थि कुछ, लूट ली उसने"—बोली।

विकलता नदी ने है दि पी-मिलनकी,
दि कलियोंने आशा है मिलके खिलनकी,
महक देके फूलों ने यह गुनगुनाया :
"जो देना है दे दे—दिया जिसने, पाया।"
दिया कुछ न कोयल ने हलकी थि झोली।
"जो था पास लटा उसी ने"—है बोली।

कमल ने दि माटीमें खिलनेकी रीती,
पतंगों ने आपा मिटाने से प्रीती।
तुम्हें देव ऋषियों ने आशिस दिया है :
"अमर हो तु—जिस ने अमरपथ लिया है।"
दिया कुछ न मीरा ने, हलकी थि झोली :
"यहीं से हरी प्रीत ली"—उसने बोली।

जानुयारि २२,
१९५७

कन्या सिष्या
इंदिरा

DILIP KUMAR ROY

सुधांजलि

सुधांजलि — इस श्रेणी का तृतीय भजनसंग्रह आप के समक्ष है। इस में पहिली दोनों "श्रुतांजलि" और "प्रेमांजलि" की विशिष्टता और माधुर्य के साथ रस और स्वाद और जोड़ दिये गये हैं। प्रथम संग्रह "श्रुतांजलि" के कुछ भजनोंकी प्रणेत्री श्री दिलीप कुमार की पुत्री शिष्या इन्दिरादेवी हैं। शेष अधिकतर उन्हें समाधि में मीरादेवी द्वारा सुनाये गये हैं, और उन्हों ने धारणा से लिखे हैं। यह दोनों विभाग विशेष चिन्हों में सदृश होते हुये भी शैली में एक सम नहीं हैं सरल और मधुर भाषा में भक्तिरस से परिपूर्ण हृदय की गंभीर भावनाओं तथा प्रभुदर्शन की प्रबल अभिलाषा को अभिव्यक्त करती हुई ऐसी सजीव कविता दुर्लभ है। बृन्दावन लीला द्वारा अभिव्यक्त प्रभु प्रेम इन्हीं पदों में कलकल निनाद करता हुआ रहस्यवादी प्रेम का परम आनन्द है। जैसे जैसे मीरा का प्रभाव तथा उस के द्वारा प्रभु-प्रेम इन्दिरादेवी के जीवन में बढ़ता गया, वैसे ही इसी श्रेणी का द्वितीय भजनसंग्रह वैसेही निर्मित "प्रेमांजलि" नाम से प्रकाशित हुआ, इस का उत्पादन अधिक गहरे भावों से हुआ है। "श्रुतांजलि" और "प्रेमांजलि" प्रेम तथा भक्ति काव्य के मनोहर उपहार हैं।

यद्यपि इन्दिरादेवी के भजन प्रभुप्रेम को भिन्न भिन्न रूपों में शुभ्र ज्योत्सना से चित्रण करते है, तोभी इनका प्रमुख विषय प्रियतम से वियोग व्यथा, अथवा माधुर्य सहित विरह है। विरह मीरा के भजनों की तथा अन्य रहस्यवादी कवियों की कविता की टेक है।

विरह प्रेम का आधार है। मिलन का परम आनन्द तथा शोभा की नींव विरह अविलपत अश्रु हैं। विरह के विना प्रेम का पोषण तथा विकास नहीं हो सकता, विरह के बाद मिलन अवश्य होता है, परन्तु मिलन विरह को एकदम समाप्त नहीं कर देता। प्रत्येक नवीन प्रकाश के परिपूर्ण होते ही विरह उत्तराधिकारी होता है, नहीं तो विरह के उपरान्त मिलन कैसे होता? इस का नित्य नवीन रस बनाये ही रहता है। अतृप्त अभिलाषा से परिवर्धित शून्यता है। विरह है, एक और अभाव और दुसरी ओर सिद्धि का भाव—जब कोई अभिलाषा अपनी पराकाष्ठा पर पहुंचती है, देश और समय संबन्धी अन्तर उन्मूलन होकर प्राप्ति पर पहुँचा देता है। प्राप्ति के साथ साधक

की ग्रहिष्णुता भी बढ़ती जाती है। और वहाँ नित्य नयी खोज शुरू होती है, असीमित की सीमा कहाँ? प्रेम की अपरिमित लीला में प्राप्ति होने पर भी परिपूर्ति नहीं होती। सब देखकर ऐसा लगता है कि कुछ नहीं देखा। असीम की तीर्थयात्रा ही अनन्त है।

देश समय सभी पदार्थों का अन्त है, शाश्वत अपरिवर्तनशीलता स्थिरता शान्ति में गति (अस्थिरता) कैसे हो सकती है? अपरिमित लीला परिमित सत्ता में निर्विघ्न वहती आ रही है। इसी लिये विरह मिलन में गति भी एक वास्तविकता है। महाप्रलय में व्यक्त जगत पूर्णरूप से अव्यक्त में लय हो जाता है, अनन्तलीला में भेद रह ही जाता है। प्राप्ति के वाद अभाव ही रहता है, और नयी खोज शुरू हो सकती है। भाव और अभाव क्रीडा की परिपुष्टि के लिये अनिवार्य है। यही महाभाव की महान् शोभा है अन्तिम अविभिन्नता—प्राप्ति होकर भी अनुभव करना कि कुछ नहीं पाया, देखकर भी समझना कि कुछ नहीं देखा।

इसी विरहद्वारा योग चिरस्थायी हो सकता है। परन्तु इस के लिये शीलमयी भावना होनी आवश्यक है। भगवान की इच्छा की साथ सहयोग से संपर्क होता है, सहयोग संघर्ष नहीं है, क्यों कि आत्मसमर्पण स्वेच्छा से ही हो सकता है। अन्तिम परीक्षण में आत्मसमर्पण निजी इच्छा का त्याग नहीं, परन्तु पूर्ण रूपान्तर है। निजी इच्छा का उनकी इच्छा में मिल जाना—यही योग है, जब आत्मसमर्पण हो जाता है तो वैयक्तिक इच्छा की पृथक सत्ता नहीं रहती। भगवान की इच्छा मेरी इच्छा है, जब दुःख आता है तो उसे भगवान की इच्छा समझ कर प्रसन्न रहूँ, यही विरह में अनुभव होता है। मीरा इसी योग की योगिनी थीं।

मीरा की निजी साक्षी में मीरा इन्दिरादेवी परमतीर्थ पंथ में सहचरी हैं, उनकी घनिष्ठ सखी है। मीरा का इन्दिरादेवी पर जो अधिकार है, वह इस गूढ़ भेद की झलक है।

मीरा का इन्दिरा देवी को ऐसे स्पष्ट होना, कविता वर्णन करना, शायद अनेक लोग असंभव घटना कहेगें। मनुष्य भावजगत तथा प्रत्यक्ष कार्य जगत से ही परिचित है। परन्तु जानने वाले, यह कभी अस्वीकार नहीं करेगें, कि यह शारीरिक जगत अतीन्द्रिय जगत से गुथा हुआ, चिदालोकज्योति से प्रकाशित शुद्ध तत्त्वमय राज्य से

व्याप्त है। अन्तरमुखी दृष्टि के विना अति प्राकृत जगत के नियमों तथा तथ्यों की खोज व्यर्थ है।

रहस्यवादी साहित्य में ऐसे बहुत उदाहरण हैं जैसे एक बार संत तेरेसा अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "इन्टीर्यर कासल", पर अपना काम कर रही थी, वो माता मेरी एक संदेश लेकर आयी, उन्हें देखते ही संत तेरेसा समाधि में चली गयी। माता मेरी वहीं खड़ी मुग्ध होकर देखती रही। जब सन्त तेरेसा की समाधि खुली, तो उन्हों ने अपना पूरा पृष्ठ लिखा हुआ पाया, उस पृष्ठ को कोई और न देख ले, इस लिये संत तेरेसा ने उस पृष्ठ को छुपा दिया। ऐसे ही माता ऐन ने सन्त तेरेसा के मुख पर अद्भुत चमत्कार पाया, वह विना इधर उधर देखे लिखती जा रही थी. एक घंटे बाद जब वह समाप्त हुआ, तब वह चमत्कार भी लोप हो गया था।

भिन्न देशों के साहित्यों में ऐसे बहु उदाहरण मिलते हैं। इस लिये विश्वास दिलाकर कहना पड़ता है, कि मीरा का इन्दिरादेवी को इस भाँति दृष्टिगोचर होना, कविता बताना, इन सब को अविश्वसनीय घटना ठहराने का कोई संगत कारण नहीं है। मुझे विश्वास है, कि पाठकगण विशेषज्ञ और भक्त "श्रुतांजलि"—प्रेमांजलि और "सुधांजलि" तीनों मनोहर उपहारों द्वारा प्राप्त अमृतमय रस तृप्ति से पान करेंगें।

—श्रीगोपीनाथ कविराज

हिंदी संक्षिप्त अनुवाद—श्रीमती सोमा तलवार

भूमिका

इन्दिरादेवी के पूर्व प्रकाशित "श्रुतांजलि" तथा "प्रेमांजलि" नामक दो भक्तिपूर्ण भजनसंग्रहों की भावुक भक्तगणों तथा विख्यात आलोचकों द्वारा की हुई प्रशंसा को देख कर, उनके इस तृतीय सजीव भजनसंग्रह को पाठकों के सम्मुख रखते हुये, मुझे और भी अधिक प्रसन्नता हो रही है। मुझे विश्वास है, इन भक्तिगीतों को भी जनता उसी प्रेम भाव से अपनायेगी, विशेषतया वह भक्तगण जिन्हों ने इन्दिरादेवी को इन भव्य भजनों से प्रभावित होकर मेरे संगीत की स्वरलहरिओं पर आत्मविभोर होकर नाचते देखा है।

यद्यपि अन्तिम छः गाने देशभक्ति के संदेश से परिपूर्ण हैं, तो भी इन्हें इस भजनसंग्रह में समाविष्ट किया है, क्यों कि यथार्थ में यह गाने अधिकतर आध्यात्मिक प्रेरणा से ही रचे गये है। इन में से तीन बँगला भजनों का अनुवाद इन्दिरादेवी ने सन १६५० में किया था। आज से पचास वर्ष पूर्व इन भजनों की रचना बङ्गाल के प्रसिद्ध कवि तथा नाटककार स्व. श्री द्विजेन्द्रलाल राय ने की थी। "पतितउधारिनिगंगे" (१३८ पृ.) नामक गङ्गास्तोत्र स्वयम् श्री द्विजेंद्रलाल राय के श्री भागरथी की संस्तुति में लिखे हुये बँगला गान का अनुवाद है। श्री मदन मोहन मालविया, जब भी मुझे मिलते थे यह स्तुतिगान गाने को कहते थे। मेरे इस गीत गाने पर उनके नेत्र सजल होकर चमकने लगते थे, और वह कह उठते थे "यह भजन प्रत्येक हिन्दु को कण्ठस्थ होना चाहिये"। यह चार भजन "श्रुताजंलि" में समाविष्ट थे, परन्तु इस ग्रन्थ के दुष्प्राप्य हो जाने के कारण मैंने इन चार गीतों को इस नवीन संग्रह में डालना उचित समझा है। मेरा निजी भजन भी (१४१) इसी कारण ही यहाँ रखा गया है। इसका अनुवाद भी मेरी पुत्री शिष्या ने सुन्दर हिन्दी में किया है। यह भजन फ्रेंच भाषाके प्रसिद्ध राष्ट्रीय गान "लामार्सलाज" की स्वर पर गाया जा सकता है।

अन्त में इन्दिरादेवी के कुछ भजनों का अंगरेज़ी अनुवाद तथा (उनसे निर्मित कुछ सुन्दर अंगरेज़ी कविता) भी जोड़ दी गयी है। यह भजन विशेषतया इनके पश्चिमीय प्रशंसक मित्रों के लिये है,

उन्होंने मुझे इन्दिरा देवी के कुछ और भजनों का भी अंगरेज़ी भाषा में अनुवाद करने का आग्रह किया है, (जैसे कि मैंने पूर्व दो संग्रहों में किया है)। उनकी सुविधा के लिये ऐसे गीतों की सूचि भी मैंने स्वतन्त्र रूपसे दे दी है। महामहोपाध्याय श्री गोपीनाथ कविराज (जो कि भारत में सहस्रों लोगों से सम्मानित तथा प्रशंसित व्यक्ति माने जाते हैं) के हम अति आभारी हैं, क्यों कि हमें विश्वास है, कि उनके इस दिव्य प्राक्कथन से निःसंशय ही पुस्तक की सुन्दरता तथा गंभीरता की प्रशंसा सच्चे आध्यात्मिक ज्ञान से प्रभावित होनेवाले सज्जन तथा भक्तगण और भी अधिक मात्रा में करेंगें।

दिलीप कुमार राय
हरिकृष्ण मन्दिर
१०८६ गणेश खण्ड रोड
पूना ५

दसहरा
१५ अक्टूबर

हिन्दी अनुवाद — श्रीमती सोमा तलवार

FOREWORD*

A few years ago—in April, 1952, to be precise—Dilip Kumar sent me *Shrutanjali*, a sheaf of sweet and euphonious songs in Hindi. A few of these were composed by his daughter-disciple, Indira Devi. The rest, and the majority, she dictated from memory, transcribing what she had heard in her *samadhi* when Mirabai came to her and sang them. The two types have, indeed, traits of similarity but are not quite identical in style.

Such living poems permeated with the essence of devotion (*bhaktirasa*) are rarely to be met with, expressing beautifully, in a simple and lucid language the heart's profound emotion and one-pointed yearning for the Lord. The divine love He manifested through His *Brndaban lila* has outflowed through these in a purling stream conveying a variety of moods rendering the ecstasy of mystic love.

As the influence of Mira and the God-love inspired by her came more and more to dominate Indira's life, a second series of remarkable songs similarly composed, accrued and were duly published, a couple of years later, in a collection entitled, *Premanjali*, which derived, I felt, from a still deeper inspiration (*bhāva*). In the realm of Hindi love-lyrics dealing with devotion (*bhakti-kāvya*), Shrutanjali together with *Premanjali* constitutes a veritable gift with a charm all its own.

Now comes her third sheaf of songs, *Sudhanjali*, wherein we find the distinction and sweetness of its predecessors duly maintained, with something superadded : a further enrichment from the point of view of variety of savours and flavours (*rasa*).

Although Indira's songs reflect various moods of God-love, all portrayed luminously, their dominant theme is the anguish of separation from the Beloved, *viraha*, with all its poignant

---

* Translated from the original Bengali of Shri Gopinath Kaviraj (and revised and approved by him) by D. K. R.

sweetness. This, as everyone knows, is the one refrain of Mira's old songs — the songs that are still extant— as well as of those of the other mystic minstrels who have sung heart-churningly of *viraha*.

In the domain of the soul's evolution the yearning of *viraha* stands, as it were, at the summit. Love cannot obtain its sustenance save through the stimulus of *viraha*. Indeed, *viraha* may well be looked upon as the quintessence of love. The supreme bliss and glory of union, *milan*, have for their basis the unwept tears of *viraha*. No wonder *viraha* is apotheosized as of the essence of love because without its nourishment love could not evolve. Not the soul alone, but the spirit, too, has its Dark Night to be traversed : Radha, the love-mad, is no figment of the poet's fancy.

It is true that there is *milan* after *virhaha*, but it is equally true that *milan* cannot put a term, once and for all, to *viraha* which keeps its vigil in the heart of *milan*. In other words, *viraha* must succeed *milan* everytime a new yearning succeeds a phase of fulfilment. Were it not so, the deeper *milan* with its attendent enrichment, could not trail, as it does, in the wake of *viraha*, thus maintaining the perennial novelty of its savour.

What is *viraha*? — A sense of void stemming from unslaked longing : on one side, we have the void (*abhāva*), on the other, simultaneous sense of fulfilment (*bhāva*). The reason is that no sooner the yearning reaches its acme of intensity, than the hiatus that stands between — of space and time and what not— is annihilated leading to attainment (*prāpti*). With every attainment the aspirant's receptivity grows, whereafter the soul cries out once again : " I want more, indeed, still more!" As a result, the attainment fails to retain its native status and a new quest begins. How put a term to the Termless ? In the infinite *lila* of love one meets with a new attainment with each new approach : one attains and yet feels as though one has failed to attain, one sees and yet feels as though not one has seen enough and the pilgrimage to the infinite continues everlastingly. A new savour accrues

at every bend : the infinite delight (*rasa*) has infinite lilts, so the journey knows no end.

And yet there is an end to everything — everytime and everywhere, for how can motion survive in the Eternal Poise — in equilibrium, ever-still, imperturbable, tranquil ?

Nonetheless, motion too is a reality wherefore the centre of every *milan* is ever-resonant with the melody of *viraha* : the *lila* of the Infinite comes floating, unimpeded, into each finite entity. The drop in the Deep and the Deep in the drop both are true — at one and the same time.

Therefore, just as the pain of *viraha* lurks at the heart of *milan*, even so, the anguish of *viraha* outflowers as the eternal bliss of *Mahamilan*, the Last Mergence. At the point of this final dissolution in the Timeless the drop and the Deep become, indeed, one ; but in the *lila* in Time a gulf still persists which, even when bridged, seems unbridgeable. In other words, at every clasp of *milan*, even when a part of the hiatus is spanned, a part of it still survives which never comes to an end in endless Time. Indeed, the attainment (*prāpti*) does come, but only to be overtaken by the void (*abhāva*) once more so the quest can start over again. Fulfilment and frustration (*bhāva* and *abhāva*) are, indeed, both equally indispensable to the continuance of the Play. This is the glorious glory of *Mahabhava*, the Identity in time : even when one attains, the longing for attainment remains unfulfilled ; even when one sees, the thirst for seeing stays unslaked.

Nevertheless, through *viraha* also the Yoga (contact) may still be perpetuated and this marvellous Yoga is rendered possible by the dynamics of the will. But for this, my will and His must both cooperate. When He withdraws His Will, the Yoga cannot come about, no more than when I decline to will it, personally. The will of either is Indispensable, though not conflict, because surrender can only happen when it is voluntary. In the last analysis, however, surrender involves not the renunciation of the personal will but only its trans-

formation. My will then becomes one with His— which *is* the Yoga. If my will were erased at the outset, this Yoga could not be established and there would only be His relationless Poise (*sthiti*). When, however, surrender is achieved, my personal will cannot exist as a separate entity: for then His Will becomes mine and I can only want what He wants, so when pain comes I must accept it as His Will, nay, even rejoice to accept everything that comes from Him. This is the Yoga experienced in *viraha* even as in *milan*: Mira is the Yogini of this Yoga.

From Mira's own testimony we gather that Indira is her intimate friend and comrade pilgrim on the Eternal Pilgrimage. Indira has yet to realise this but Mira is fully alive to it, being fully conscious of having attained the Haven. One can get an inkling of this mystic secret from the extraordinary authority she wields over Indira.

Some people may dismiss— as an incredible miracle— the phenomenon of Mira's appearing before Indira to sing to her and lead her " day after marvellous day. " But I am persuaded that here there is no valid reason for scepticism. Men are acquainted with the sense-world, the perceptible world of fact. But none who know will dare deny that this material world is profoundly pervaded by and interlocked with a super-sensuous and immaculate world radiant with the light of a supernal Consciousness (*atindriya, chidālokojjvala, shuddhasattvamaya rājya*). But till one acquires the inward-gazing vision (*antarmukhi drishti*) one must seek in vain for a clue to this supraphysical world and its laws and data.

One is reminded, incidentally, of Saint Teresa. Once, while she was living cloistered in a Toledo Convent, Mother Mary of the Angels called on her to deliver an important message. St. Teresa was at the time writing her famous book, *Interior Castle*. Engrossed in her work, she had just started on a fresh page when the visitor called. But no sooner had she taken off her spectacles in order to receive the message than she went off into a *samadhi* and stayed in it, self-absorbed, for several hours. Mother Mary, overawed, did

not leave the room but waited on, looking at St. Teresa fixedly. When at last the latter came to, the blank page was found filled, from top to bottom, with written lines. Realising that an outsider had come to surprise her secret, St. Teresa hastily thrust the sheet away into a box.

It is also reported that a nun, named Mother Anne of the Incarnation, was once passing before St. Teresa's cell when she caught a glimpse of her face. She stopped, amazed: St. Teresa's face was illuminated with an intense light as she went on writing rapidly without pausing once to revise or correct what came! After about an hour, at midnight, she finished, when lo, the miraculous light on her face vanished! Thereafter St. Teresa kneeled and prayed for full three hours before going to bed. *

Such authoritative accounts, duly authenticated, are on record in the mystic literature of various countries. I have myself some personal experience of phenomena such as these. So I am persuaded, I repeat, that there is no rational justification for discrediting Mira's coming to Indira in person, singing to her and leading her day by day.

In fine, I cherish a hope that sympathetic readers, connoisseurs and devotees will all savour delightedly these nectarous outpourings conveyed through the three offerings: *Shrutanjali*, *Premanjali* and *Sudhanjali*.

SHRI GOPINATH KAVIRAJ,
2/A Sigra
Banaras.

September, 1956

* Introduction to St. Teresa's *Interior Castle* by Father Benedict Zimmerman pp. 10-11.

PREFACE

As the two previous volumes of Indira Devi's devotional songs entitled, *Shrutanjali* and *Premanjali* have been acclaimed by hundreds of devotees and discerning critics, I feel happy to present a third volume of her soulful poems. These, I trust, will be as welcome to her readers and, in especial, to those who have seen her dance ecstatically to some of these songs to the accompaniment of my singing.

The last six songs have been accorded a place here as they derive, essentially, from a spiritual inspiration even though their message is patriotic. Of these, three were translated by her in 1950, from the original Bengali songs composed by Bengal's famous poet and dramatist, Dwijendralal Roy, fifty years ago. The hymn to Ganga (p. 138) is rendered from Dwijendralal's famous Bengali song which Pundit Madan Mohan Malaviya was wont to ask me to sing to him whenever we met. (And everytime I sang it he used to say, his eyes glistening with unshed tears : " Every Hindu should know this by heart. "). These four songs were published in *Shrutanjali* but as this book is now unavailable, I have thought fit to include them in the present collection. The song on page 143 has been translated by my daughter disciple from a Bengali song of mine and can be sung in the tune of *Marseillaise*.

At the end I have appended a sheaf of her songs translated into English (as well as a few beautiful poems she wrote in English.) These are intended primarily for her appreciative friends in the West. For these a separate index has been given at the end for their convenience. Mahamahopadhyaya Shri Gopinath Kaviraj, revered by thousands in India, has put us under a deep debt by writing for *Sudhanjali* a luminous Foreword whose beauty and profundity will, doubtless, be appreciated by all who are moved by the appraisement of a man of God endowed with true spiritual vision. Shrimati Soma Tulwar of Kanpur has put us under

a debt by translating Shri Gopinath's Foreword into Hindi and Shri Aina helped in typing out the translations. We thank also our dear sister, Shrimati Savitri Khanna, Shri Varma and Pundit Pandharinath Mukunda Dangre of Maharashtra Rashtrabhasha Prachar Samiti, Poona, for having so lovingly helped us in revising the spelling and punctuation of these *bhajans*. Last, but not the least, we thank dear and energetic brother, M. J. Shahani for having helped us in so many ways. But for his initiative this book could never have come out before the blessed birthday anniversary celebration o Indira Devi on March 26, 1958.

DILIP KUMAR ROY
Hari Krishna Mandir
Ganesh Khind Road
Poona—5

Holi Purnima
March, 5, 1958

सूचिपत्र

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५	१६	तरसें	तरसे
८	१८	अरध	अरघ
२३	२	कहों	कहीं
३०	८	छोडे	यह छोड़े
३०	१३	न कोई बरी	न कोइ बैरी
३०	२१	घोई	धोई
४२	१६	ऐसा न	ऐसान
४६	१४	चरण	चरणन
५१	१८	ही	री
५२	१३	जगदीशकी	जगदीशको
५२	१७	चोर	चीर
५३	७	मिले	मिलें
६३	१७	चुकाय	चुकायो
६४	१५	है तेरे मुख है	हैं तेरे मुख हैं
६७	१५	दती	देती
६६	१६	मिले है	मिले हैं
६८	१५	हया	हिया
१३६	१५	जाये	आये
१३६	१७	उन्होंके	उन्हींके
१४१	७	दामिनोके	दामिनीके
१४१	१६	माँ, हृदयसे	माँ, मैं हृदयसे
१४२	१७	जनम जनम जहाँ	जनम जहाँ

INDIRA DEVI

सुधांजलि

(१)

हरीमिलनकी आश है मोहे, हरीमिलनकी आश।
भवसागरतट फिरूँ तिसाई, कौन मिटाये प्यास ?

खोल दिये हैं मनके मंदिर,
कबहूँ आवे प्रीतम अंदर ?
नैनाँ पथपर रहूँ लगाये,
हृदय प्रेमका दीप जलाये,
ठाकुर ! मेरी सुनो आरती पूजा आवे रास ॥

यह जग दीवानोंकी बसती,
क्या तोलूँ मैं महँगी सस्ती। ?
सीप छोड़ जो मोती चाहे,
उसे कहें यह बौरा हाये !
इस डालीके फल हैं फीके, फूल यहाँ बिन वास ॥

तुम मेरे प्रभु और न कोई,
घर दर छोड़ बैरागन होई,
नामसे झोली भर दे मेरी
मीरा जनम जनमकी चेरी,
टूटे ना प्रभु, प्रीत तिहारी—रहे या छुटे स्वास ॥

(२)

हरिदरशनकी प्यासी री मैं, दूर देशसे आई ।
गली-गली मैं ढूँढ रही री, मिलियो नाहिं कन्हाई ॥

ज्ञान न जानूँ, ध्यान न जानूँ, मैं तो प्रेमदिवानी ।
प्रीत करूँ प्रीतम नहिं जानूँ, रीत भि है अनजानी ।
हरीमिलनका चाव है मनमें, अँखियाँ बड़ीं तिसाई ।
हरिदरशनकी प्यासी री मैं, दूर देशसे आई ॥

हरीनाम सुन भई बावरी, अब घरकाज न भाये ।
छूट गये संग, सखी, सहेली—अपने हुए पराये ।
नगर नगरकी जाचक हो गई, लोक-लाज बिसराई ।
हरिदरशनकी प्यासी री मैं, दूर देशसे आई ॥

प्रभु कैसे, मैं कैसी बोलो, राजा वह, मैं भिखारी ।
चाँद धराका मिलन क्या होवे—सोच भई दुखियारी ।
वह अनाथके नाथ सखी, वह निर्धनके हैं सहाई ।
हरिदरशनकी प्यासी री मैं, दूर देशसें आई ॥

करूँगि अर्पण नैनके मोती, हूक हृदयकी दूँगी ।
जनम मरणकी आशा देके चरण पियाके लूँगी ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, दीज्यो मोहे ठाँई ।
हरिदरशनकी प्यासी री मैं, दूर देशसे आई ॥

(३)

धीरे धीरे जीवन-नैया चली हरीकी ओर।
धीमे धीमे डोल रही है तटके बंधन तोर॥

जल गहरा चंचल हैं तरंगें,
व्याकुल विरही मनकि उमंगें,
कैसे बिन पतवारके नैया पावेगी प्रभु ठौर?

डोल न मन जो काली राती,
हृदयदीप धर प्रेमकि बाती,
लग्गी आश कि, नाम खिवैया, बाँध प्रीतकी डोर॥

पथ अनजाना, दूर किनारा,
मेरा तो इक श्याम सहारा,
मीराके प्रभु हाथ थामके चरणन संग लो जोर॥

(४)

हरीचरणकी दासी मीरा गोविंद गोविंद गाती।
भवसागरतट फिरे तिसाई प्रभु बिन कल नहिं पाती॥

तीरथ मंदिर मैं नहिं जानूँ, ना मैं शंख बजाती।
हरीनाम जित गावे संतन वोही ठौर सुहाती॥

ज्ञान ध्यान मैं जानूँ नाहीं, ना मैं जोबन माती।
प्रेमकि माला, प्रेमके मोती हरिचरणनमें लाती॥

निंदा उपमा मैं नहिं जानूँ लोक-लाज ना आती।
जनम-जनमकी दासी मीरा मुरलीके रंग राती॥

(५)

राधे गोविंद बोल रे प्राणी, नाम हरीका बोल।
छिन छिन अवसर बीता जाये, पल पल है अनमोल।

राजभवनमें राजा दुखिया, दुखिया देख भिखारी।
सोहि सुखी जिन ओट गुरुकी, जिनकी टेक मुरारी॥
जिस नैयाके श्याम खिवैया, कभी न जाये डोल॥

तात मात सुत बंधू भाई कहे जिन्हें तू मेरा।
चार दिनोंके साथी सारे अंत न कोई तेरा।
तेरा तो हैं एक कन्हाई, मनकी आंखें खोल॥

कहती मीरा "सुन रें प्राणी, जों तुझे जाना पार,
गुरुचरणकी धूली हो जा, तन मन धन दे वार।
हरीमिलनकी रीत यहीं हैं तोल सके तो तोल॥"

(६)

तुम विन मेरो और न दूजो, प्रभुजी कोई न और।
तू धनमान बढ़ाई मेरी, तू ही मेरी ठौर॥

बंधू बेली अपनें परायें
जीवनसाथी जिन्हें बनायें
साँझ भई वह काम न आये—टूटी प्रेमकि डोर॥

अपने अब हो गये बिगाने,
निंदा उपमा मन नहिं मानें,
तुम विन प्रभुजी एक न जानें नैनन भरते लोर॥

कहती मीरा "ओ गिरधारी!
भली बुरी मैं नाथ तिहारी!
कबसे दरपे तेरे ठाड़ी चरणन संग ले जोर॥"

(७)

देखें बाट तिहारी प्रभुजी, नैनाँ बाट तिहारी।
साँझ सकारे लगे दुवारे, जागें रतियाँ कारी॥
प्रभुजी, देखें बाट तिहारी॥
ऋतु सावनकी मेहा बरसे, निसदिन नैनाँ मेरे।
कितही चंदा सूरज चमके! प्रभु बिन घोर अँधेरे।
दरशन बिन ये भये बावरे, दरशन दो बनवारी!
प्रभुजी, देखें बाट तिहारी॥
लाखोंही रंगोंमें देखें प्रभुजी तेरी छाया।
पर हो चाँद नदीमें जैसे—हाथ कभी ना आया।
क्यूँ कहता दिल—तू चिरसाथी, तू है हृदयविहारी!
प्रभूजी, देखें बाट तिहारी॥
धन जोबन ना, राजकाज ना, आन मान ना चाहूँ।
ज्ञान ध्यान ना साधन जानूँ—क्या चरणों में लाऊँ?
मैं इक नाम तिहारा जानूँ, मीराके गिरधारी!
प्रभुजी, देखें बाट तिहारी॥

(८)

हरीमिलनकी रीत न जानूँ—कौन मुझे बतलाये?
अंग अंग व्याकुल मेरा तरसें—प्रभु बिन कल नहिं आये।
राजमहल संग सखी न भाये,
जीवनके सुख हुए पराये,
टूट गये हैं तार हृदयके—वीणा कौन बजाये?
क्या जानूँ यह प्रीत है कैसी?
चंदा संग हो कूँई जैसी!
मन परवाना बनके मेरा दीपकपे जल जाये।
कोई कहे मैं प्रेमदिवानी,
दीन भिखारन बनी है रानी,
आन मिलो मीराके मोहन! जीवन बीता जाये॥

(९)

मन मेरा वैरागी राजा, करे यह किससे प्यार ?
तन दुखिया महलोंमें मेरा, गहने हो गये भार ॥

घर नहिं माँगे, धन नहिं माँगे, माँगे आन न मान ।
शांती शकती सुख नहिं माँगे, माँगे ना यह ज्ञान ।
यह तो माँगे चरण हरीके, देखे आर न पार ॥

प्रभु कारण मैं बनूँ बैरागन मथुरा नगरी जाऊँ ।
कुंज गली बन दीन भिखारन गोविंद गोविंद गाऊँ ।
हृदय प्रेमका दीप बनाऊँ—अँसुवनके कर हार ॥

प्रभुसंग मेरे लाखों नाते युग युगकी है प्रीत ॥
तात, मात, सुत, बंधू मेरे—बड़े पुराने मीत ।
जनम-जनमकी दासी मीरा माँगे नंदकुमार ॥

(१०)

हरी बिना ना चैन सखी री, हरि बिन दुःख हज़ार ।
अंबर लाखों तारे झलकें चंदा बिन अँधियार ॥

फूल न सोहे महक बिना ज्यूँ, ज्योति बिना ना नैन,
प्रेमी प्रीतम बिन नाहिं सोहे, चंदा बिन नहिं रैन,
हरी नाम बिन जीवन सूना—हृदय हो ज्यूँ बिन प्यार ॥

चार दिनोंके संगी साथी पलभरका है मेल,
कलके बंधू आजके बैरी—धूपछाँवका खेल,
तन नहिं अपना, मन नहिं अपना, अपना ना संसार ॥

बंदी राजा और भिखारी आश-निराशा जाल,
बालूके मंदिर इस जगके पल पल तोड़े काल ।
"हरी बिना है अंत न कोई"—मीरा कहे पुकार ॥

(११)

क्यूँ नैनाँ तरसें दरशनको—जो हृदयमें प्राणमें तू !
तू पास भि रह क्यूँ दूर हरी—जो जीवमें जानमें तू !

तू मंदिरकी प्रतिमामें, तू पूजाकी थालीमें।
तू चंचल भँवरेमें है, तू फूलोंकी लालीमें।
तू राजनका रखवाला है, बलवानका मान है तू।
तू ठाकुरभी, साधनभी तू, ध्यानीका ध्यानभि तू॥

तू ही मुसकान अधरपे है, नैनोंका नीर भि तू।
तू चैन है, शांती सुख है तू, वेदनकी पीर भि तू।

तू अंबरके तारोंमें, तू धरणीकी गहराई।
तू प्रीतम है, प्रीती भी है, तू प्रेमी सौदाई।
तू छलिया है, चितचोर है तू, मोहन भगवान् भि तू।
तू कुल है इस कुलनाशीका, मीराकी आन भि तू॥

(१२)

कभी इकबार देखेंगे तुझे नैनाँ ये दुखियारे,
इसी आशामें काटूँगी हजारों रातें गिन तारे!

तुम्हारी बाँसुरीकी धुन कभी पाऊँगि कानोंमें,
लगेगी आग गुंजनसे हरी, तनमनमें प्राणोंमें,
इसी आशामें गाऊँगी हजारों राग ओ प्यारे,
कभी इकबार देखेंगे तुझे नैनाँ ये दुखियारे!

कभी मीराकि प्रीतीमें कहो ये बलभि आयेगा—
लगेगा सिर जहाँ धूलीपे—तेरे चरण पायेगा?
मरण जीवन हरष वेदन करूँ अर्पण तुझे सारे,
कभी इकबार देखेंगे तुझे नैनाँ ये दुखियारे!

(१३)

कभी ऐसा भि दिन होगा—तुम्हारी मैं हो जाऊँगी ?
मैं हर आशा निराशा तज हरी-चरणों में आऊँगी ?

तुम्हारी याद में कब मैं गिनूँगी रातके तारे ?
बिना तेरे, हरी मेरे ये दिन कब होंगे अँधियारे ?
तुम्हारे नामकी जोगिन मैं कब गोकुलमें गाऊँगी ?
कभी ऐसा भि दिन होगा—तुम्हारी मैं हो जाऊंगी ?

चमकते सीप तटके तज उतर आऊँगि सिंधू में ?
अमर सागरकि हर रंगत मैं कब पाऊँगि विंदू में ?

तुम्हारी प्रीतमें जगकी विसर जायेंगि सब प्रीतें ?
तुम्हारी रीत पा लेनेसे खो जायेंगि सब रीतें ?
हरष वेदन मरण जीवन मैं कब इककर मनाऊँगी ?
कभी ऐसा भि दिन होगा—तुम्हारी मैं हो जाऊँगी ?

तुम्हारा नाम सुनते कब ये भर भर नैन आयेंगे ?
हृदयमें प्राणोंमें स्वासोंमें तेरा वास पायेंगे ?

मुझे अपना लो, ठुकरा दो, बनावो तुम्, मिटावो तुम् ।
हुँ निर्बल, बल हो तुम् मेरे, चरणसंग अब लगावो तुम् ।
अरध जीवनका देके नाथ, तेरी शरण पाऊँगी ?
कभी ऐसा भि दिन होगा—तुम्हारी मैं हो जाऊँगी ?

(१४)

न बदली है धरणी, न बदला गगन है।
वही बुलबुलोंकी कलीसे लगन है।
चली बादलोंकी वह बेवससि टोली।
वही कुंजवनमें है कोयलकि बोली।

सभी तो वही है, नहीं तू वह राही।
कहीं पथपे सुखकी है कुंजी गँवाई॥

वही झिलमिलाते हैं अंबरके गहने।
वही चाँदकी आरसी रैन पहने।
पिया मिलने आई है पनघटपे आली।
उठा भार जोवनका कोमलसि डाली।

सभी तो वही है, नहीं तू वह राही।
कहीं पथपे सुखकी है कुंजी गँवाई॥

है रूपा ढला बनके गंगाकि धारा।
बजा शंख प्रेमीने प्रभुको पुकारा।
चली है पुजारिन ले पूजाकि थाली।
वही सादगीकी हँसी भोलिभाली।

सभी तो वही है, नहीं तू वह राही।
कहीं पथपे सुखकी है कुंजी गँवाई॥

लिये क्या चला है—तू क्या लेने आया।
अमर है यह सागर फिरे तू तिसाया।
न खोले जो नैनाँ—जगत है अँधेरा।
जलाये न दीपक—तो सूना बसेरा।

सभी तो वही है, नहीं तू वह राही।
कहीं पथपे सुखकी है कुंजी गँवाई॥

(१५)

तुम बिन कौन हमारो, प्रभुजी, तुम बिन कौन हमारो ?
जनम जनमकी दासी मीरा—राखो चाहे मारो।

तात मात सुत बंधू मेरे, दुख सुख के तुम साथी।
तुम सिंधू, तुम ही विंदू प्रभु, तुम चंदा, तुम बाती।
बुध बल नाहीं, पथ नहिं जानूँ, आओ साथ हमारो।
तुम बिन कौन हमारो, प्रभुजी, तुम बिन कौन हमारो ?

तेरे मेरे लाखों नाते—युग युगकी है प्रीती।
जग जीता सब हारी प्रभु मैं, आपा खो सब जीती।
उनकी कट गइ माया बेड़ी—जिनको श्यामल प्यारो।
तुम बिन कौन हमारो, प्रभुजी, तुम बिन कौन हमारो ?

(१६)

तुम्हीं लगाते जो द्वार अपने, मैं फिराति काहे युँ द्वारे द्वारे ?
तुम्हीं सहारा जो एक देते, अनेक लेती मैं क्यूँ सहारे ?

तुम्हींसे हमने लगन लगाई,
तुम्हें हि पाने मैं श्याम आई,
बनाती अपने मैं क्यूँ बिगाने—जो अपने बनते तुम्हीं हमारे ?

न ज्ञान जानूँ, न ध्यान जानूँ,
अनाथ अबला, न मान जानूँ,
तुम्हीं जो करुणासे झोलि भरते—मैं फिराति काहे युँ कर पसारे ?

कठिन है जीना, मरण न आये,
तुम्हीं मिले ना, जगत न भाये,
चरण दो स्वामी, दरश पिया दो—है दासी मीरा हरी पुकारे॥

(१७)

क्यूँ माटीकी कायामें अंबरसे ज्योती आई ?
(इक) चारदिनोंके पंछीने क्यूँ अमर सुधा है पाइ ?

(क्यूँ) बार बार संसारमें आये युगयुगमें मेहमान ?
बड़े भाग संतनके लेवें धूलमें लाल पहचान !

जब जब नाव धराकी डोले मायाके मँझधार,
आवे बन अनजान खिवैया करने नैया पार ॥

कोइ कहे—सीतापति रामा, कोई—कृष्ण मुरारि ।
कोइ कहे—शिव शंकर भोला कोई—त्रिशूलधारी ।

कोइ कहे—सद्गुरु परमेश्वर, कोई—माइ भवानी ।
कोइ कहे—तू गंगा मैया, कोई—राधारानी ।

मीरा कहती : "तू ही तू है, तुझसे कौन नियारा ?
तू बहुरुप धरे बहुरुपी, नित नव खेल तुम्हारा !"

ध्यानी ध्यान धरे नित तेरा, ज्ञानी देवे ज्ञान ।
राजन ऊँचे मंदिर बाँधे, योगी बाँधे प्राण ।

जिन जिन तुमपे डोरी डाली इक चित तुझे बुलाया,
दासनका तू दास बना, भक्तनकी सेवा आया ।

मीरा जनम जनमकी दासी कहती : "हे चिरसाथी !
फिर आओ गोपाल लाल ! अब भई है आधी राती ।"

(१८)

शरण तेरि पानेको अब जी रही हूँ।
तुम्हारी कहानेको अब जी रही हूँ॥

जो इकबार नैनाँ तुम्हें देख पायें,
ये प्यासे हैं युग युगके तृष्णा मिटायें,
तरसते हैं अंग अंग तेरा संग चाहें,

मैं चरणों में आनेको अब जी रही हूँ।
तुम्हारी कहानेको अब जी रही हूँ॥

लो आशा निराशा यह सुख चैन ले लो,
मेरा हर पहर लो, दिवस रैन ले लो,
यह रसना, यह रचना मेरे बैन ले लो,

मैं तन मन मिटानेको अब जी रही हूँ।
तुम्हारी कहानेको अब जी रही हूँ॥

न ऋद्धी, न सिद्धी, न चाहूँ मैं शक्ति,
नहीं ज्ञान बल माँगुँ, चाहूँ न मुक्ति,
हरी! देना मीराको चरणोंकि भक्ति,

मैं आपा जलानेको अब जी रही हूँ।
तुम्हारी कहानेको अब जी रही हूँ॥

(१६)

किस गुणका तू मान करे मन, किस बल पर इतराया ?
माटी हो जायेगी इक दिन माटीकी यह काया।

किस मायामें पड़ा है भोले ? जोबनका क्या मान ?
यह वसंत ऋतु जीवनकी है, कुछ दिनकी मेहमान।
कली खिली तो फूल बना जो फूल खिला कुम्हलाया।
माटी हो जायेगी इक दिन माटीकी यह काया॥

मान न करना दौलतका मन, यह बरखाका पानी।
यह सावन ऋतु जीवनकी है, यह भी आनी जानी।
इस बादलका क्या है सहारा ? इसकी झूठी छाया।
माटी हो जायेगी इक दिन माटीकी यह काया॥

मान न करना इस बुद्धीका—यह तो तटका सीप।
रैन अँधेरीमें यह जुगनू—इसका कितना दीप ?
इसकी लौसे दिखे अँधेरा बढ़ता जाये साया।
माटी हो जायेगी इक दिन माटीकी यह काया॥

मान तु कर उस ठाकुरका मन, जिससे सब तू पाये।
वह देनेवाला सब जगका, फिरभी नज़र न आये।
करती मीरा मान गुरूका—जिन मो श्याम मिलाया।
माटी हो जायेगी इक दिन माटीकी यह काया॥

(२०)

" माइ यशोदा ! लाल तुम्हारा कैसा चतुर कन्हाई !
चोरी कर यह रार करे है—लाज ज़रा नहिं आई !
तन काला मन काला इसका—काली राती आया !
कैसा श्याम करे उजियारा—चाँद देख शरमाया ॥

" छलिया है, चितचोर है मोहन, बालक जान न माई !
हमसे तुमसे खेल करत हैं—मुखमें ले लोकाई ! "
मात कहे : " है लाल हमारा सखियाँ स्वामी माने ।
यह घटघटका जाननवाला, इसको को नहिं जाने ॥ "

" नाथ अनाथोंका यह है री—भक्तनका भगवान् ।
धरणीका पालक आया हो धरणीका मेहमान ।
यह है एक, अनेक भि यह ही, यह ठाकुर, यह चेरा । "
कहती मीरा " बड़ा नियारा, माई, लाल है तेरा ॥ "

(२१)

तुझे पानेकि आशा तज तुझे पानेका बल माँगूँ ।
नहीं माँगूँ अमर शांती—चरण तेरे मैं पल माँगूँ ॥
सुधा ऐसी पिला—तेरे बिना सुधबुध न रह जाये ॥
लगन ऐसी लगा अपनी—लगन सब और बह जाये ॥

लगे यूँ नामकी अगनी यह जीवन लौ हि बन जाये ।
न छूटे प्रीत अब मनसे—जगत जाये यह तन जाये ॥
न दुख जानूँ, न सुख जानूँ, मरण जीवन न जानूँ मैं ।
न गुण अवगुण पिया, मानूँ, हरष वेदन न मानूँ मैं ॥

बनूँ मैं प्रेमदीवानी—हरीके गीत गाऊँ मैं ।
बनूँ मैं नामकी जाचक, नगर मोहनके जाऊँ मैं ॥
सुना—जगकी अँधेरी रातमें जगदीश आओ तुम ।
हृदय जीवन अँधेरा है, दरश दीपक जलाओ तुम ॥

(२२)

काहे करे गुमान रे मन तू? नेम प्रेमका न्यारा।
उपमा करे सो बैरी तेरा, निंदा करे सो प्यारा।

जिन प्रीतम संग प्रीत लगाई,
छूट गई सब भली बुराई
कोइ न उनका रहे सहाई—जिनका नाथ सहारा।

उपमा करे जो आन बढ़ावे,
झूठा मनका मान बढ़ावे
निंदक निंदा करे उठावे, सारा भार तुम्हारा।

भय जलसे—जब खड़े किनारे,
अब तो नैया हरी सहारे,
कोई न तुमको राखे मारे—सद्गुरु मीत तुम्हारा॥

(२३)

प्रेम लगो बन तीर हृदयमें, प्रेम लगो बन तीर।
लाखों बैद बुलाये राजन्! किसी न जानी पीर!

पीर बिगानी कौन पहचाने?
लगी लगन जिस तन वहि जाने,
व्याकुल नैनाँ निसादिन तरसें—छम छम बरसे नीर।

तीर अनोखा, पीर नियारी,
मीठी मीठी, प्यारी प्यारी,
छेद दियो हैं प्रेम बाणसे दूईके पट चीर।

अंग अंग छेद मुरलिया कर दे,
अपने स्वाससे जीवन भर दे,
मीराके प्रभु ऐसा वर दे—धरे न तुम बिन धीर॥

(२४)

मन आनंद भयो सखीरी,
साजन घर आये हमारे !
भवसागर जीवननैया,
हरिकरुणा लगी किनारे !

मंदिर प्रतिमामें ढूँढा,
वन पर्वत खोजत हारी,
वड़ि आरति पूजा कीनी
मैं फिर फिर दीप जला री !
नहिं जानी बात हरीकी,
बाती क्या जाने तारे ?

हाथोंके कंगन तोड़े,
महलोंके साथी छोड़े,
वैरागी भेश बनाये
फिरि गलियन साँझ सकारे ॥

संतनने प्रीत बताई,
हरि मिलनकि रीत बताई,
हम भले बुरे सो तेरे,
हम बालक, पिता, तुम्हारे ॥

मोहे अबला जान उठायो,
प्रभु चरणन संग बिठायो,
युग युगके बंधन काटे
सद्गुरु गोविंद हमारे ॥

(२५)

हे गोपाल, नंदलाल ! आइ शरण तेरी ।
दीन हूँ, मैं दान माँगुँ—झोलि भर तु मेरी ॥

राजकाज साज नहीं, घर न, धन न माँगूँ ।
ज्ञान, ध्यान, मान नहीं—सुख स्वजन न माँगूँ ।
मैं तो सेवा दान माँगुँ—राख चरण चेरी ।
दीन हूँ, मैं दान माँगुँ—झोलि भर तु मेरी ॥

रंग अपने नाथ मेरे, रंग अंग अंग दे ।
मुझमें तुझमें भेद रहे ना—तु ऐसा रंग दे ।
लाख रंग रंगे तू ने अब है कैसि देरी ?
दीन हूँ, मैं दान माँगुँ—झोलि भर तु मेरी ॥

लोग कहें जगतपाल, करते पूजा आरति ।
मैं तो जानूँ—तू गोपाल—तू सखाका सारथि ।
जानुँ—तू हि ऋद्धि सिद्धि, तू हि मुक्ति मेरी ।
हे गोपाल, नंदलाल ! आइ शरण तेरी ॥

जानुँ—तू हि सद्गुरू है, तू हि संत सांचा ।
तू हि बन गौरांग प्रेमि, प्रेमपंथि नाचा ।
मैं तो जानुँ—तू हि तू है, मीरा दासि तेरी ।
दीन हूँ, मैं दान माँगुँ—झोलि भर तु मेरी ॥

(२६)

प्रभु, दरशन दे महाराज आज दे दरशन प्रीतम मेरे !
मैं बड़ी देरसे खड़ी प्रभू, नहिं खुलते द्वारे तेरे !

मोहे दरशनकी है आश बड़ी,
मैं शरणागत, दर आन पड़ी,
मैं बड़ी तिसाई नाथ, खड़ी : पथ देखूँ साँझ सबेरे।

मोसे कितने ही आये हरी।
तू करुणा कर अपनाये हरी !
मीरा भी रो रो गाये हरी, दरशन दे साजन मेरे !

लाई मैं ज्ञान न ध्यान हरी।
कर दयापे तेरी मान हरी !
संतनमें बैठी आन हरी, दरशन दे प्रभुजी मेरे !

(२७)

जनम मरणके मीत हमारे, दुखसुखके तुम साथी।
पल छिन नाथ मैं तुझे धियाऊँ, बिसरूँ ना दिनराती॥

कौन कहे तू निठुर कन्हाई ? कौन कहे बेगाना ?
कौन कहे बेदरदी मोहन तेरा दूर ठिकाना ?
तू भक्तनका अंग संग बेली, स्वास स्वासका वाली।
जिनको एक तुम्हारी आशा कभी न जाये खाली।
तब मैं जानी प्रीत तुम्हारी—जब तेरे रंगराती॥

तुझसा भकत न कोई दूजा, भकतवछल गिरधारी !
दासनका तू दास है स्वामी, तू है प्रेमपुजारी।
जिस जिन रूप धियाया तोहे, इकचित तुझे पुकारा,
सखा बना तू बना सारथी, बालक बना पियारा।
धन धन दासी मीरा तेरी गोविंद गोविंद गाती॥

(२८)

कबतक करेगा हीलेहाले, कबतक होगी यह मन मानी ?
जिनने सीखे हेरे फेरे—उनने प्रीत रीत ना जानी ।

मन ! तू छलना किसको चाहे ?
टालमटोले कर समझाये ?
छलिया आपहि धोखा खाये—यह तो बात पुरानी ।
मन ! तू प्रीत रीत ना जानी ॥

खेल नहीं है मिलन पियाका,
सूर्यमुखी बन खिलन जियाका,
कठिन जलन है प्रेमदियाका चंचल मन तूफानी ।
मन ! तू प्रीत रीत ना जानी ॥

प्रेमबनिज भगवानसे कर ना,
सस्ते मोती झोली भर ना,
तन मन धन सुख जीना मरना दाम शरणाका प्राणी !
रे तू प्रीत रीत ना जानी ॥

कहती मीरा : सुन मन मेरे !
जो भवसागर पार लगे रे,
जिन मन चित हरिनाम बसेरे तोल मोल ना जानी ।
उनने रीत प्रीतकी जानी ॥

(२९)

मुझे माँ,
अपना सा कर दे।
अपना सा कर गंगे, इक इक अंग सुधा भर दे।

मैं हुँ मलिन, कर निर्मल मोहे, धो दे सब भय मनका।
मैं मेरीकी माया धो दे—मान यह धन जोवनका॥

अपनी लहरोंसा कर व्याकुल जागे पीर हृदयकी।
हरी मिलन बिन चैन न आये बँधे न धीर हृदयकी॥

योगी भोगी राजा दुखिया बैरी मीत जो आये,
अंक लगा तू करती शीतल शंका चिंता जाये॥

अमृतिकी धारा भागीरथि, जान्हवि, सुरधुनि, गंगे!
मोहे अपनी विंदु बना, मैं मिलुँ हरिसिंधू संगे।

(३०)

जिन एक हरीकी आश लगी—उन आश रही न पराई।
जिन हृदय बसे हरिनाम सखी, उन भली रही न बुराई॥

जिन हरीचरणसंग प्रीत भई,
उन हार रही, ना जीत रही,
उन गुण अवगुण कछु नहिं लागे—जिन प्रभुसंग लगन लगाई॥

जिन अपना आप गँवा देखा,
उन सब कुछ दे सब पा देखा,
उन निंदा उपमा ना लागे—जिन आन मान ना काई॥

बिंदू सागरमें आये रही,
दूईका भेद मिटाये रही,
भगवान भकत अब एक हुए—प्रीतीकी रीत बताई॥

(३१)

तुम बिन सब बिगरी मेरि प्रभुजी, बिगरी बिना तुम्हारे।
उलझे तार हृदयवीणाके गीत अधूरे सारे।

लाखोंही प्रतिमा राखी भी, तोड़ी भी मन मंदिर,
प्रेम रहा फीका ही रंगा लाखों रंगों अंदर।
तुम बिन किसी न झोली भर दी लाखों हाथ पसारे।
तुम बिन सब बिगरी मेरि प्रभुजी, बिगरी बिना तुम्हारे॥

तुम बिन क्या खो गया हरी जी, ना जाने इस मनका।
खो गया चैन हृदयका तुम बिन, खो गया पथ जीवनका।
तुम बिन जीना भी जीना है क्या गोपाल पियारे?
तुम बिन सब बिगरी मेरि प्रभुजी, बिगरी बिना तुम्हारे॥

तुम बिन आश करूँ मैं किसकी? किसे बनाऊँ मीत?
तुम बिन सब है आना जाना—धन जोवन सुख प्रीत।
तुम बिन मीरा और न चाहे, राती चरण तिहारे।
उलझे तार हृदय-वीणाके गीत अधूरे सारे॥

(३२)

जिन हृदय बसे गोपाल, सखी,
वह मंदिर और गये, न गये।

जिनके अंतर हरिनाम रहे,
वह तीरथ धाम रहे न रहे॥

जिन एक हरीकी आश लगी,
जिन हरि दरशनकी प्यास लगी,
जिनके मन प्रेमकि सुधा बहे,
उन अम्रित और पिये न पिये।
जिन आपा दे दिया चरणोंमें,
उन कोटी दान दिये न दिये॥

जो प्रेम दिवाने हो बैठे,
जो लोक लाज सब खो बैठे,
जिन प्रेमका मंतर सीख लिया,
उन वेद पुराण पढ़े न पढ़े।
जो द्वार हरीके आन पड़े
वो ऊँचे द्वार चढ़े न चढ़े॥

जो प्रेमनगरमें वास करें,
जो एक पियाकी आश करें,
जिन संत चरणकी धूल मिले,
उन माथे तिलक दिये न दिये।
जिन मुखसे राधेश्याम कहा
उन नाम अनेक लिये न लिये॥

(२३)

सखीरी, सुन मधुरसी धुन, कहीं मुरली की है आये।
मुझे खोई हुई कोई कहानी याद है लाये।

मुझे है याद वृंदावन में भीनी रात सावन की।
लगी थीं पथमें अँखियाँ आश थी मोहनके आवन की।

झलकती दामिनी पल पल घटा घनघोर थी छाई।
बनी नागन चली यमुना बिफरति कालि बल खाई।
मैं ऐसी रात में बरसात में प्रभु दरश थे पाये।
मुझे खोई हुई कोई कहानी याद है आये।

इसी मुरली की लयसे काम जगके छूट जाते थे,
पितामाता स्वजन स्वामी के नाते टूट जाते थे।

मुझे है याद जाना पीको मिलने लाख छल करके,
न मिल कुछ लाजसे कहना न मुख तकना नयन भरके।
समझ जाते थे बिन बोले हरीको कौन समझाये?
मुझे खोई हुई कोई कहानी याद है आये।

जो तू कह दे भरम है यह, सपन सा इक सुहाना है,
नहीं माने यह दिल जाने —यह बंधन तो पुराना है।

बड़े नाते प्रभू संग हैं पुरानी है बड़ी प्रीति।
बुलाके पास छिप जायें —निठुर की है यही रीति।
मरण जीवन रहूँ दासी सदा मीरा यह है गाये।
मुझे खोई हुई कोई कहानी याद है लाये।

(३४)

मिट्टी का दिया है यह काया, पर कितनी आश लगाये है।
जीवन की ज़रा सी जोत मिली सूरज से मिलना चाहे है।

अध खिली कली हो डाली से
गिरूँ किसी कि पूजा थाली में
चरणों में पड़ुँ बनमाली के
यह निसदिन मीरा गाये है।

अंबर का तारा हो जाऊँ,
मैं चाँद कि नावमें सो जाऊँ,
प्रीतमके दरशन को जाऊँ
जिन बिना न जीवन भाये है।

मैं पथ की धूली बनूँ पिया,
तेरे चरणों से लगे हिया,
जीवन का छोटा सा यह दिया
इस आश में जलता जाये है॥

(३५)

काहे की चिंता मन मेरे ?—कैसा सोच विचार ?
उनको मार सके ना को —जिन राखे राखनहार॥

सुमिरन कर ले नाम हरीका वेला बीत न जाये।
बड़े भागसे जनम मिला है, काहे बृथा लुटाये ?
हरिचरणन ना छूटे मन रे ! छूटन दे संसार॥

जितने तारे अंबरके हों उतने दोष तुम्हारे।
हरिकरुणाकी भोरसे भोले कटे अँधेरे सारे।
गुण अवगुण वह परखे नाहीं देखे सच्चा प्यार॥

मैं मेरीके तोड़ दे बंधन, छोड़ दे झूठी प्रीत।
जिन हरिचरणन पाया उनके वैरी रहे न मीत।
मीरा जनम जनमकी दासी सुमिरे नंदकुमार॥

(३६)

हरीका अंत न जाने कोई, हारे संत सयाने जी !
हरीकि रीत हरी ही जाने, और न कोई जाने जी !

योगी कहते—योग प्रभू है, ज्ञानी कहते—ज्ञान।
भगतवछल है—प्रेमी कहते, ध्यानी कहते—ध्यान।
निराकार है वह परमेश्वर, कोई गोविंद माने जी !

तू सबमें सब तुझमें फिरभी सबसे रहे नियारा।
जलभी तू, दलदल भी तू है, तू है कमल पियारा।
तू सागरभी, विंदू भी तू, मोती तू हि सुहाने जी।

ज्ञान ध्यान अनजान न जानूँ, तेरा अंत न चाहूँ।
मीरा दासीकी विनती प्रभु, तुझमें ही मिट जाऊँ।
तेरा किया भला नित लागे, मैं भी तू—मन माने जी !

(३७)

जित चाहो उत राखो प्रभुजी, मैं तो दासी तेरी।
'तेरी तेरी' सब हो जाये—रहे न मेरी मेरी।

तुम जानो—कुछ जानूँ नाही,
सब दर छोड़ तेरे दर आई,
तात मात नहिं बंधू भाई—मैं तो दासी तेरी॥

मेरा गुण अवगुण है तुम्हारा,
मैं इक जानूँ नाम पियारा,
मीरा ले नहिं और सहारा—मैं तो दासी तेरी॥

तीरथ है इस तनके अंदर,
गंगा जल नैननके अंदर,
मेरा रग रग हरिका मंदिर—मैं तो दासी तेरी॥

(३८)

चल चल री वहाँ
यमुनातट जहाँ
आज साँवल मुरलिया बजाये, सखी !
सुनके कलियाँ खिलें,
डालियाँ गल मिले,
कुंज कुंज वसंत है छाये, सखी !

चरण नुपुर बजे,
कान कुंडल सजे,
गल माला हरीके सुहाये, सखी !
कदम छाया तले
राधा रुमझुम चले,
नैनाँ प्रेमका नीर बहाये, सखी ।

जहाँ यमूनाके घाट
सखियाँ रोके बाट
गोपी रूठे गोपाल मनाये, सखी !
जहाँ कुंज गली
हरिकी मुरली
सुन घर काज सब भूल जाये, सखी !

मोसे रहो न जाय,
अंग अंग कुम्हलाय,
सुनो प्रीतम है आज बुलाये, सखी !
मीरा हो बावरी
माये—"गोविंद हरी !
मेरे प्राणोंमें मोहन समाये, सखी !
जनमं जनमके साथी हैं पाये, सखी !"

(३६)

आज सखी, सुन कहाँसे आई नूपुरकी झनकार ?
सज धज कर यह चली कहाँ हैं वृंदावनकी नार ?

कदम तले यह कौन साँवरिया,
मोर मुकुट सिर, अधर बाँसरिया,
नाच रहा है री नटवारिया,
गल वैजंती हार !

सुन री, कैसी मुरलि वजाई !
वृंदावनमें आग लगाई !
दरशन को सब सृष्टी आई
झूम गया संसार।

क्या रि सखी, यह कृष्णा मुरारि !
परम मनोहर गोकुलचारी
राधावल्लभ हृदयविहारी,
नाचे नंदकुमार !

मीराके प्रभु गिरिधर नागर !
भकतवछल तुम करुणासागर !
राखो जी अब राखो चाकर,
लो दासीकी सार !

(४०)

इक दिन तुम बिन फिर बीत गया,
प्रभु, तुम बिन दिन गया मेरा !
पल पल ढलते फिर साँझ भई
फिर बिछने लगा अँधेरा !

फिर आश भरी इक भोर भई,
तुम बिन फीकी पड़ लौट गई,
अँखियाँ थि निराश, निराश रहीं,
नहिं दरशन पाया तेरा !

फिर मनका मान न छूट सका,
मैं-मैं-का जाल न टूट सका,
भोला मन सत नहिं लूट सका,
फिर सूना रहा बसेरा !

मैं हार गई, करूँ बिनती रो।
दरशन दो, प्रभुजी, दरशन दो !
अब फिर दरशन बिन भोर न हो !
फिर विफल न होय सवेरा !

(४१)

अब रही न अपनि पराई कोई, रही न अपनि पराई।
तुम संग क्या बन गइ मोरि प्रभूजी, सकल संग बन आई !

मीरा पर कैसी दया भई,
तू तू जो कहा, मैं मैं न रही,
सब भरम गया, शंका भी गई, अब रही न भली बुराई।

इक कारण छोड़ अनेक दिये,
तब इकमें अनेक हैं देख लिये,
इक लौ सबमें परवेश किये, है भेद भाव ना काई।

मीरा जब हो गइ तेरि प्रभू !
सब कट गइ दूई मेरि प्रभु !
को नाथ है, को है चेरि प्रभू—तू मीरा, तू हि कन्हाई॥

(४२)

जनम मरणके नाथ हमारे, दुख सुखके चिरसाथी !
तोहे विसार मैं कैसे जीऊँ ? तुम बिन कल नहिं पाती !

तेरी गाथा हरी, सुनावे—सोही बंधू मेरा ।
तात मात सुत भाई वह—जो राह दिखावे तेरा ।
कहीं कोइ मोहे श्याम मिलावे ढूँढूँ मैं दिनराती ॥

प्रेमलगन तो खेल नहीं, जिस तन लागे वह जाने ।
इस पथ प्रेमी चले अकेला, अपने बने बिगाने ।
फिर भी तुम बिन रह नहिं पाये वह—जिन मुरलि बुलाती ॥

तुम बिन किसे बनाऊँ अपना ? किस संग करूँ मैं प्रीत ?
तुम मेरे तो सब जग मेरा—तुम बिन कोइ न मीत ।
दासी मीरा जनम जनम प्रभु, गोविंद गोविंद गाती ॥

(४३)

तुम नहीं आये हरीजी, आज भी तुम आये ना !
मन रहा व्याकुल युँहीं, नैनोंने दरशन पाये ना !

ज़ोर तुम पर तो नहीं, पर मनपे भी क्या ज़ोर है ?
तुम न मानो, मन न माने, अब कहो कहाँ ठौर है ?
तुम न अपनाओ हमें, मन और को अपनाये ना !

ढल चला आशामें जीवन, हूइ पूरी आश ना !
तटिनिकी कल कल रहे, सुनते मिटाइ प्यास ना !
मेघ भूले, हो न बरखा, बगिया तो जल पाये ना !

कैसे हो यह भकतवत्सल, मीराके गोपाल तुम ?
दरश माँगा, दे रहे हो याद अपनी लाल तुम !
याद तो आती है मोहन, तुम तो प्रभुजी आये ना !

(४४)

चरण तेरे कमल, मोहन! है मन भौंरा हरी, मेरा।
चरण कोमल, है मन चंचल, यह कैसे छोड़े संग तेरा?
कली सुखकी न यह माँगे, सुरभि धनकी न यह चाहे,
हरी चरणोंका यह प्रेमी, प्रेमबगियामें मंडराये।

न जोबन फूल यह माँगे, न जगकी डालपे झूमे।
हरीकी धुन करे गुन गुन, यह भक्तीकुंजमें घूमे।
यह दीवाना तुम्हारा है— छोड़े कैसे संग तेरा?
चरण तेरे कमल, मोहन! है मन भौंरा हरी, मेरा।

(४५)

मन मेरा परदेसी राजा, यह जग लगे पराया।
कमल चरणका भँवरा यह नित प्रेमकुंज मंडराया॥

न कोई वरी मीत है मेरा—तात मात ना भाई।
जो हरिजन हरिनाम सुनावे—उसी संग बन आई।
ना रानी, ना राजकुमारी राजकरण नहिं आई।
मैं इक वृंदावनकी बाला—आई मिलन कन्हाई।
वहुरूपीको खोजन आई—यह वहुरूप बनाया।
मन मेरा परदेसी राजा, यह जग लगे पराया॥

कोइ कहे कुलनाशी रानी, लोकलाज है खोई।
राजकाज तज हरी धियाये कपट छिपाये कोई।
मैल हृदयकी हँस हँस मैंने इस निंदासे धोई।
मीराकी यह प्रेमबारता होनी थी सो होई।
फिर मन भौंरा हुआ वावरा—प्रेमसुधाको आया॥
मन मेरा परदेसी राजा, यह जग लगे पराया॥

(४६)

सखी ! न पूछ मुझसे—प्रेम उनसे क्यूँ लगाया है ?
जिसे न देखा नैनोंने वह कैसे मनको भाया है ?
मुझे सखी, पता नहीं,
पता जो है तो है यही :
जगके हरेक रंगमें,
छिपा वह लाख ढंगसे,
हृदयकि हर उमंगमें,
आशा भरी तरंगमें,
मेरे तो अंग अंगमें उसीका नाम छाया है ॥

सखी ! न पूछ मुझसे—क्यूँ किसीका इंतजार है ?
जिसे न देखा एकबार—यह उससे कैसा प्यार है ?
मुझे सखी, पता नहीं,
पता जो है, तो है यही :
पवनकि मस्त चालमें
फूलोंसे भारि डालमें
नदीके मीठे तालमें
कलीके लाल गालमें
मेरे हरेक हालमें यह याद बार बार है ॥

सखी ! न पूछ मुझसे—क्यूँ है आति याद इस तरह ?
छवी जो देखि ही नहीं वह दिलपे छाइ किस तरह ?
मुझे सखी, पता नहीं,
पता जो है तो है यही :
पिया न यह अनजाना है,
यह प्रेम तो पुराना है,
जीवन भि यह बहाना है,
जो खोया है वह पाना है,
मीरा तो इक तराना है—हरीने गाया जिस तरह !

(४७)

सागरसे कहा यह बिंदूने : मुझमें तुझमें कुछ भेद नहीं।
मैं प्राण हुँ लहरमें सिंधूमें—मुझमें तुझमें कुछ भेद नहीं।
तुमसे हो जुदा इक कतरा हूँ मैं निठुर हवाओंके बसमें :
चाहे तो लुटा दे धूलीमें या दे दें घटाओंके बसमें॥

कंकरने कहा यह पर्वतसे : तुझमें मुझमें कुछ भेद नहीं।
लग संग तेरे आपा न रहा—तुझमें मुझमें कुछ भेद नहीं।
तुझसे हो जुदा इक ज़र्रा हूँ—बेरहम तूफानोंके बसमें :
चाहे तो डालो धरणीपे वीरान चटानोंके बसमें॥

भक्तनने कहा भगवानसे यह : तुझमें मुझमें कुछ भेद नहीं।
दूईको गँवा आ तुझसे मिले—तुझमें मुझमें कुछ भेद नहीं।
तुझसे हो जुदा हम कुछ भि नहीं—बिधनाके खिलौने रंगरंगके।
ली शरण तेरी बलवान् हुए—जब नाम बसाया अंगअंगमें॥

(४८)

यह ठान ली है मनमें अब के तुमको पायेंगे।
जीवनकि बाज़ि खेलमें अब हम लगायेंगे॥

मैं मेरि सारि छोड़के
आपेसे भी मुँह मोड़के
ज्योतीसे प्राण जोड़के ज्योती हो जायेंगे॥

है बंद नयन द्वार अब,
खुलेंगे इकहि बार अब,
हरी ! जो लोगे सार तब यह दरश पायेंगे॥

होनी है जो हुआ करे,
मन कालसे भि ना डरे,
जीते वही जो सब हरे—हम कर दिखायेंगे॥

(४६)

मैं प्रेममें व्याकुल तटिनी हूँ करुणासागरमें समाना है।
जो पास है मेरे अर्पण कर मोहे प्रभुसंग इक हो जाना है।
अब बावरि कह जग टोके क्या?
बंध टूट चुके, अब रोके क्या?
हरिनामकी मस्त घटाओंसे जल जीवनका अब पाना है॥

मैं तो परदेसी पंछी हूँ, मोहे देश पियाके जाना है।
मायाके तिनके तोड़ मुझे तारोंसे प्रीत लगाना है।
जग झूठे जाल बिछाये क्या?
मीठे रागोंसे रिझाये क्या?
हरिनामके पंख लगा करके चंदासे प्रीतम लाना है।

मैं तो मतवारी जोगिन हूँ, मोहनसे मिलने जाना है।
सब लोकलाज तनमन धन दे हरिकी दासी कहलाना है।
जो बीत चुकी फिर बीत रही,
युग युग यह प्रीतकि रीत रही,
मीरा इक प्रेमकहानी है यह प्रेम सदा दुहराना है॥

(५०)

आये उधोजी श्याम ना, तो तुम कहो क्युँ आये हो ?
हृदय हैं प्यासे जल नहीं, संदेश जलका लाये हो !

गगनमें मुस्कराके चाँद पीकि याद लाता है।
दुलहन धराको तारोंकी वह चुनरिसे सजाता है।

रूपहलि रात यमुनाकी बेहाल हर तरंग है।
उछल उछल लिपट रही वह देखो तटके संग है।

ऐसेमें श्याम आये ना, तो तुम कहो क्युँ आये हो ?
हृदय हैं प्यासे, जल नहीं, संदेश जलका लाये हो !

वसंत कुंज कुंजमें रंगत निरालिं लाइ है।
हुए हैं भँवरे बावरे कली कली लजाइ है।

केहाका साज देखके हैं झूम रही डालियाँ।
हैं बुलबुलोंके चहचहे पत्ते बजायें तालियाँ।

जो अबभि श्याम आये ना, तो तुम कहो क्युँ आये हो ?
हृदय हैं प्यासे, जल नहीं, संदेश जलका लाये हो !

लगन लगाके हमसे श्याम दिल्लगी हैं कर रहे।
हैं पूछते वह हाल क्या—हैं जी रहे, न मर रहे ?

भली करें, बुरी करें, मिटायें वह बनायें वह :
रहेंगे जैसे राखें वह—भुलायें या बुलायें वह।

मगर जो श्याम आये ना—तो तुम कहो क्युँ आये हो ?
हृदय हैं प्यासे, जल नहीं, संदेश जलका लाये हो।

(५१)

जानूँ न सखी, कल अध राती क्युँ श्याम सपनमें आये थे।
कोमलसे अधर थे काँप रहे, धीमेसे प्रभु मुस्काये थे!

जानूँ ना चाँदसे मुखपे क्यूँ चिंताकि घटा थी आइ हुई।
जो दुखभंजन कुल जगके हैं—उनपे थि उदासी छाइ हुई।

घटघटके जाननवाले वह राधाकि दशा पा ली तो नहीं।
आहोंने हवाओं संग मिलके कहिं पीकि शरण जा ली तो नहीं!

लिख दूँगि सखी, प्रभुको पाती: "नंदित है राधा, हरी तेरी!
उस दिलमें काहे बिथा रहे—जिस दिलमें प्रीत भरी तेरी?"

कह दूँगी: "याद तिहारि पिया, मैं अपनी जान बनाये हूँ।
जिस पथपे तेरे चरण पड़े—वह धूली अंग लगाये हूँ।

नैनाँ जो नीर भरें साजन, धो देंगे यह मनमंदिर भी।
इस द्वारसे ही अनमोल छबी तेरी आई थी अंदर भी।

"जानूँ मैं लाख तपस्यासे पाते हैं तपी तुझे गिरधारी!
धन राधा जिस संग प्रीत करी, धन मीरा दासी बनवारी।

तुम दूर रहो, या पास रहो, तुम याद करो या बिसराओ:
मैं जनम जनम हरिनाम भजूँ, तुम मेरे प्राणहि बन जाओ।"

(५२)

न जानुँ क्या हूँ मैं सखी, तुझे बताउँ क्या ?
यह भेद मैं न पा सकी, तुझे जताउँ क्या ?
हरीके अधर मुरलि है, मैं उसकि तान हूँ।
हरीके नाम धनुकका मैं एक बाण हूँ।
किसी भगतके मुखसे निकला हुआ गीत हूँ।
प्रेमी जो हार दे सभी—मैं वोहि जीत हूँ।
नहीं, नहीं, मैं कुछ नहीं,
वही है सब, है सब वही,
न जानुँ क्या हूँ मैं सखी, तुझे बताउँ क्या ?
यह भेद मैं न पा सकी, तुझे जताउँ क्या ?
हुँ आँसु मैं किसी सखीके मधुर नैनमें।
हुँ जुगनु मैं किसी पथिककिं कालि रैनमें।
हरीचरणमें भेंट दिया हुआ हार हूँ।
किसीकि प्रेमवीणाका मैं एक तार हूँ।
नहीं, नहीं, मैं कुछ नहीं,
वही है सब, है सब वही,
न जानुँ क्या हुँ मैं सखी, तुझे बताउँ क्या ?
यह भेद मैं न पा सकी, तुझें जताउँ क्या ?
गोकुलकि बाला हूँ सखी, मीरा मेवारकी।
संतनकि चरणधूल हूँ, दासी मैं प्यारकी।
गोपाल कर जो बिक चुकी मैं एक खेल हूँ।
करुणाकि डालसे लगी ज़रासि वेल हूँ।
नहीं, नहीं मैं कुछ नहीं,
वही है सब, है सब वही,
न जानुँ क्या हुँ मैं सखी, तुझे बताउँ क्या ?
यह भेद मैं न पा सकी, तुझे जताउँ क्या ?

(५३)

पूछो जो मुझसे : "बोल तू है ऐसे गाये क्यूँ ?
कोई सुने या ना सुने—किसे सुनाये तू ?"

"कोयल कि कूक किस लिये ? हृदय कि हूक किस लिये ?
कलीका साज किस लिये ? नदीका नाच किस लिये ?"

"वेवस-सि होके ऐसे ही कहें हैं गाये क्यूँ ?
कोई सुने या ना सुने—किसे सुनाये तू ?"

"पपीहा शोर क्यूँ करे ? यह रास मोर क्यूँ करे ?
भूमें घटायें किस लिये ? चलें हवायें किस लिये ?"

"वेवस-सि होके ऐसे ही कहें हैं गाये क्यूँ ?
कोई सुने या ना सुने—किसे सुनाये तू ?"

"मगन हैं संत किस लिये ? मधुर वसंत किस लिये ?
गगनमें लालि किस लिये ? हरी है डालि किस लिये ?"

"वेवस-सि होके ऐसे ही कहें हैं गाये क्यूँ ?
कोई सुने या ना सुने—किसे सुनाये तू ?"

"भगत हरीको चाहे क्यूँ ? विन पी न चैन पाये क्यूँ ?
दिलको प्रभूसे प्रीत क्यूँ ? है उसकि ऐसि रीत क्यूँ ?"

"वेवस-सि होके ऐसे ही कहें हैं गाये क्यूँ ?"
कोई सुने या ना सुने—किसे सुनाये तू ?

(५४)

मैं प्रभुकी हो जाऊँगी,
मैं प्रभुकी हो जाऊँ।

झूठी वासना इंधन कर मैं प्रेमकि आग जलाऊँ।
मैं मेरीके करूँ अंगारे, नामकि भसम लगाऊँ॥

आशाकी कलियोंकी माला प्रभुको आज पहनाऊँ।
तन मन धन सब अर्पण कर मैं आप भोग हो जाऊँ॥

बाटकि धूली बन जाऊँ मैं अपना आप मिटाऊँ।
हियेसे चरण लगाके सखी मैं अमर आज हो जाऊँ॥

करुणा सागर जीवन नैया नामकि लग्गी बनाऊँ।
गुरूनाम पतवार करूँ मैं भवसागर तर जाऊँ॥

(५५)

साजन ! जित देखूँ—सब तेरा।
तन भी तेरा मन भी तेरा—कछु नहिं प्रभुजी, मेरा।
मैं तो जित देखूँ—सब तेरा॥
जो मैं प्रभुजी, मंदिर जाऊँ—पूजा कर नहिं पाऊँ।
तू फूलोंमें तू प्रतिमामें—हार किसे पहनाऊँ ?
आरति करूँ मैं कैसी तेरी ? कैसी ज्योत जलाऊँ ?
तू थालीमें, तू वातीमें—दीप किसे दिखलाऊँ ?
कैसे दूर रहूँ निंदकसे—दोष किसे मैं लगाऊँ ?
जिसको देखूँ—तू ही तू है, वैरी किसे बनाऊँ ?
कैसे कहूँ मैं अवला मीरा, प्रभुतक कैसे जाऊँ ?
साधक भी तू, साधन भी तू—सिद्धी किसकी पाऊँ ?

(५६)

त्याग बिना नहिं प्रेम सखीरी, सच्चा प्रेम है त्याग।
सौदा नहिं यह लेन देनका प्रेम सदा बेलाग॥

प्रेमी! खो नहिं प्रेमकि आन, सब कुछ देना ही है मान,
दर नहिं माँगो, वर नहिं माँगो—माँगो ना कुछ दान,
त्यागके इंधनसे ही जलती सदा प्रेमकी आग॥

प्रेमी नंदित सदा सखी, आनंदसुधा है प्रीत।
जिनको आशा सब छोड़नकी उनकी जीत हि जीत।
त्यागाकि वीणापे ही बजता सदा राग अनुराग॥

मीरा! प्रेममें प्रेम हि हो जा, तन मन धन सुध बुध सब खो जा,
हृदयरक्तसे प्रेमकि राहें हँस हँसके तू धो जा।
त्याग दे अंतर बाहर आपा प्रेम उठेगा जाग॥

(५७)

पड़ा भरममें काहे प्राणी, कैसा सोचविचार?
आश लगाये लाख बरसकी जीवनके दिन चार?

पहले देख तो अपने अंदर,
जोत जला ले मनके मंदिर,
एक दीपसे और जलेंगे झलक उठे संसार॥

तुझको भी तो है कुछ करना,
विफल नहीं है जीना मरना,
यही भेद तू खोल ले पहले—भेद खुलेंगे हज़ार॥

मीरा तू इक प्रेमकि बिंदू,
पा ले पहले करुणासिंधू,
प्रभुसंग मिल सब अंत मिलेगा—दिखेगा आर भि पार॥

(५८)

मन ! तेरा मान न गया अभी जीवनकी साँझ हो आई ।
पलभरका परदेसी पंछी कैसी रार मचाई !

जो जीवनके अँधियारे पथपे हृदयसे दीप जलाया,
इस माटीकी कायामें हरिनामकि लौ जो लाया,
मानकी आँधीसे तू ने रह रह कर शिखा बुझाई !

तू लाख सोच कर रंगबिरंगे हवामें महल बनाये ।
मरीचिकाको कहता जल, तू दिनको रात बताये ।
शतीकि तू उलझन सुलझाये पलकी सुध नहिं पाई !

अब प्रेमका दीप जलाया मैं ने बंद कर तेरे द्वार ।
तेरी हारमें जीत है मेरी, तेरी जीत में हार ।

मन ! अबभी 'मैं-मेरी' ना छोड़ी—कैसी रार मचाई !

(५९)

सखी ! दिलकी लगी मेरी कहो संसार क्या जाने ?
वह क्या जाने कि क्यूँ जलने शिखा पर आयें परवाने ?

वह क्या जाने कि क्यूँ अनजान प्रीतम मनको भाता है ?
लगन कैसी यह छायासे कि सपना जग हो जाता है ?
वह क्या जाने कि क्यूँ पलभरमें अपने होते बेगाने ?

वह क्या जाने कि क्यूँ जीवनके सुख सब छूट जाते हैं ?
पितामाता स्वजन स्वामीके नाते टूट जाते हैं ?
न दुख निंदासे होता है, न जी उपमाको पहचाने !

जगतकी हर सुहानी शय हरीकी याद लाती है ।
हृदयसे प्राणसे रग रगसे प्रभूकी गूँज आती है ।
नहीं मुरली सुनी जिनने वह रस मुरलीका क्या जाने ?

(६०)

सुमिरन कर ले रामनाम–हरिनाम है प्राण अधार।
नाम है शांती, शकती, मुकती—नाम सुधाकी धार॥

नाम-डोरसे नित ही बाँधे भगत हरीके हाथ।
इकचित हो जो नाम बुलायें—उड़के आयें नाथ।
हरिसे मीठा नाम हरीका—मीरा कहे पुकार॥

जिन मुखसे हरिनाम कहा, जिन हृदय बसाया नाम,
(उन) जानो कोटी दान दिये, उन अंतर तीरथधाम।

नामके दर्पण छबी हरीकी पल पल मनमें आवे।
किरण नामकी पा ले मीरा दिवसराज मिल जावे।
जीवनवीणा तो हि सुहावे—जो हरिनाम हो तार॥

(६१)

हरिकरुणा है अपार सखीरी, हरिकरुणा है अपार।
शीतल पवन-सि घेर रही यह जीवनका आधार॥

हृदयकि बगिया, त्यागकि डाली, प्रेमका फूल लगाया।
हरिकरुणाकी उठी बदरिया जल नैननमें आया।
इसी नीरसे सींची डाली—आई मधुर बहार॥

जीवन नैया, लग्गी नामकी, दरसके सुंदर मोती।
आशाकी चंचल हैं तरंगें, गुरुनामकी ज्योती।
यह नैया तब पार लगेगी, करुणा हो पतवार॥

मन चातक मीराका प्यासा लागे रैन बरससी।
करुणाके अंबरसे आई स्वाती बूँद दरसकी।
गुरुकरुणा है अपार सखीरी, हरिकरुणा है अपार॥

(६२)

यह प्रेमि! कैसि प्रीत है—यह कैसि प्रीत तेरि है?
न त्याग, ना बैराग है—यहाँ तो 'मेरि मेरि' है!

तू ने जो दे दिया ज़रा
तो मानसे गया भरा!
दिया जो तू ने तोलके
ले देख जाँच मोलके!
जताके लाख बार तू
सुनाके दे हज़ार तू,
न त्याग, ना बैराग है—यहाँ तो 'मेरि मेरि' है!

तु करता प्रीत लेनको:
धिक्कार ऐसे देनको!
है अंत प्रीत प्रीतकी,
है हार जीत प्रीतकी,
जो प्रीत है—तो भय नहीं,
ऐसा न कोइ शय नहीं,
प्रेमीका यही नेम है,
इसीका नाम प्रेम है,
न त्याग, ना बैराग है—यहाँ तो 'मेरि मेरि' है!

है पास तेरे किसका है,
यह तीन लोक जिसका है,
जो प्रेमका पुजारि हो,
तो पहले मन, भिखारि हो,
वह दाता दान कर रहा,
सभीकि झोलि भर रहा,
तु आपा खो उसीसा हो,
है साचा प्रेमी एक वह,
न त्याग, ना बैराग है—यहाँ तो 'मेरि मेरि' है!

(६३)

कहते सुनते वहुदिन वीते, हरिकी सुध नहि पाई।
नदी किनारे गिनी तरंगें—आत्मा रही तिसाई॥

वेद पुराण पढ़े वहुतेरे खेले रंग रंगीले।
मन! अपने वहलानेको क्या क्या कीये नहि हीले!
पल पल अवसर वीत गया अव साँझकि वेला आई!

चंदा तारे झलकें लाखों सूरज चढ़े हज़ार।
तू नहिं पलकें खोले भोले, तेरा जग अंधियार।
आप खड़े मँझधार—सपनकी नैया पार लगाई!

प्यासा राखे जलकी तृष्णा, लोभी लोभ है धनका।
राजन है महलनका प्यारा भोगी है जोबनका।
मीरा तो प्रभु कछु नहिं चाहे इक हरि-दरश-तिसाई!

(६४)

उठ जाग सखी, तू देख ज़रा—तेरे साजन खड़े दुआरे!
तू नैन मूँदके सोय रही, मनमोहन तुझे पुकारे!

यह प्रीत करनकी रीत नहीं,
वह जाग रहे, तू सोय रही,
तेरे आँगन आया चाँद सखी, तू सपने गिनती तारे।

कुछ हार सिंगार वनाया नहीं,
सखि, प्रेमका कजरा पाया नहीं,
उठ, मन मंदिरमें दीप जला—आये हैं साजन प्यारे॥

वह ज्ञान ध्यान कुछ परखे नहीं,
गुण-हीन है तू, गुणहीन सही,
वह प्रीत हृदयकी देखे सखी, भूले वह अवगुण सारे॥

(६५)

आगसी लगी यह कैसि आज मनमें मेरे।
अंग अंग सुलग रहे काहे तनमें मेरे।

किसने चैन लूट लिया!
यह किसीने क्या है किया!
ढूँढे आज किसको हिया दिन हुए अँधेरे!

आइ है अवाज कैसि आज कानोंमें यह!
दिलके तार बज उठे—समाइ प्राणोंमें यह!

मुरलि कैसि यह बजाई!
आग में सुधा मिलाई।
बावरी हो भाग आइ डालुँ कहाँ फेरे!

याद आइ आज कैसि भूलिसी कहानी!
जाग उठी फिर हृदयमें प्रीत वह पुरानी!

बीते दिन वह लौट आये!
वृंदावनकि याद लाये!
फिर मुझे हरी बुलाये: "आओ पास मेरे!"

(६६)

मन रे ! छोड़ दे तू मन-मानी ।
प्रेम करे रे क्या दीवाने, प्रीतकि रीत न जानी ?

सुखके यतन करे बहुतेरे :
पर किन गलियन डाले फेरे ?
मरीचिका है यह तो भोले ! तू समझा है पानी ॥

सुख माँगनसे कभी मिले ना,
बंद मुठीमें कली खिले ना,
खोल दे झोली, दे दे आपा, पा ले सुधा मनभानी ॥

इत उत काहे जनम गँवाये ?
पल पल जीवन ढलता जाये !
बीत गया फिर लौट न आये, दुनिया आनी जानी ॥

जो करना है आज हि कर ले,
नामरतनसे झोली भर ले,
कहीं अधूरी रह नहिं जाये तेरी प्रेमकहानी ॥

कहती मीरा : " सुन मन भोले !
हेरफेरमें तू क्यूँ डोले ?
त्याग तीरसे छेद दे आपा—यह संतनकी बानी " ॥

(६७)

हरी बिना सुख नहीं कहीं भी, हरि बिन सुख कहिं नाहीं।
सुख नहिं धन दौलत महलनमें, सुख नहिं मान बढ़ाई॥

तात मात बंधू अपनायें,
मैं मेरीमें जनम गँवायें,
अंत समय को काम न आये सखा मीत सुत भाई॥

सुख नहिं तीरथ मंदिर पूजा चंचल मन अभिमानी।
मंदिरमें प्रतिमा माटीकी गंगाजल है पानी।
सुख मंदिर जित राम बसे मन तीरथ बसे कन्हाई॥

सुख सेवामें, सुख साधनमें, शांति त्यागमें मनकी।
नैनन जल ले, हृदय दीप ले अंजलि तन मन धनकी।
हरीशरण बिन सुख नहिं मीरा, हरीशरण सुखदायी॥

(६८)

गुरु-चरण-संग लागी मीरा राती रंग कन्हाई।
जनम जनमकी टूटी प्रभुसंग सद्‌गुरू आन मिलाई॥

गुरु मेरे सुत तात मात—गुरु मेरे बंधू भाई।
मैं अनाथ, गुरु नाथ हमारो—मेरे संग सहाई।
गुरु मेरो साधन सिद्धी मुक्ती, गुरूनाम सुखदायी॥

मैं अबला—गुण रूप न साधन—आई सद्‌गुरु-द्वारे।
कोई यतन मोहे हरी मिला दो—बिनती सद्‌गुरु प्यारे!
हाथ पकर गुरु शरण लगायो, हरिकी रीत बताई!

हरीमिलनसे कठिन है मीरा, अपना सद्‌गुरु पाना।
हरिकरुणासे खुले जो नैनाँ—तो मैं गुरु पहचाना।
हरी मिलायो गुरु मुझे, गुरु हरिकी शरण लगाई।

(६९)

तुम बिन मेरी कौन करे प्रभु, दीननाथ, गिरधारी ?
भकतबछल तुम दुष्टविनाशक, केशव कृष्ण मुरारि !

पतित-उधारन, करुणासागर, माधव कुंजविहारी !
हे जगदीश, परम परमेश्वर मोहन मुरलीधारी !

शंख चक्र कर गदा पद्म ले तुम वृंदावनचारी !
गल बिच माल कमलदल नैनाँ प्रभु पीतांबरधारी !

मीराके गोपाल कन्हाई हरिनामपे मैं वारी।
हे चितचोर चिरंतन प्रीतम, प्रेमी, प्रेमपुजारी !

(७०)

लगन कैसे लगे प्रभुकी—लगी जिस तन वही जाने।
न ज्ञानी ज्ञानसे समझे, न योगी बलसे पहचाने॥

निराली रीत है प्रभुकी—यह शोले भी निराले हैं।
लिपटमें ले लिये निर्धन महल राजनके वाले हैं।
इसी लौ पे भगत युग युग बने हैं प्रेम-परवाने॥

यह लगके बुझ नहीं सकती, लगे ना यह लगानेसे।
लगी देखो तो यह कैसे ज़रासे इक बहानेसे।
यह इंधन त्यागका माँगे, न देखे अपने बेगाने॥

कहे मीरा : सुनो प्रभुजी, लगन ऐसी लगा देना :
भसम हो जाये मैं मेरी, यह आपा भी जला देना।
यह जीवन लौ हि बन जाये लगे हर स्वास अपनाने॥

(७१)

यह जीवन है किस काम सखी,
जो लिया नहीं हरिनाम सखी,
जो मिले नहीं घनश्याम सखी,
जो मिले नहीं घनश्याम !

यह जोबन रूप व साज सखी,
यह धन दौलत सुख राज सखी,
है विफल बिना अधिराज सखी,
है विफल बिना गुणधाम!

मुख राधे गोविंद बोल सखी,
भय भरम बीच ना डोल सखी,
हरिनाम बड़ा अनमोल सखी,
अनमोल बड़ा हरिनाम !

मैं मेरी कर दे सब अर्पण,
ले आ चरणनमें तनमनधन,
मिल जायेंगे फिर अमर सजन,
मिल जायेंगे घनश्याम !

हरि मीरा दासी द्वार खड़ी,
लगि दरशनकी है प्यास बड़ी,
हूँ दीन हरी, मैं शरण पड़ी,
अब दरशन दे दो श्याम !

जय केशव कृष्ण मुरारि हरी !
जय मुकुंद मुरलीधारि हरी !
जय दुखभंजन गिरधारि हरी !
जय मनमोहन अभिराम !

जय नारायण बनवारी जय !
परमेश्वर कुंजविहारी जय !
मधुसूदन गोकुलचारी जय ! जय राधावल्लभ श्याम !

(७२)

मोहे इतना ही दे दान हरी :—
मुख सदा जपूँ भगवान हरी
हर स्वास स्वास हर प्राण हरी,
मैं पल पल तुझे धियाऊँ।

ना माँगू मैं घरवार हरी!
नहिं तात मात परिवार हरी!
नहिं धन जीवन संसार हरी!
मैं शरण तिहारी चाहूँ।

मोहे दान दे : कर दूँ सब अर्पण,
गुण अवगुण दुख सुख जनम मरण,
सब भली बुरी दूँ तन मन धन
मैं हरिचरणनमें लाऊँ।

मुझे दे बल निर्बल होनेका,
दे दान मुझे सब खोनेका,
मुझे दे सुख प्रेममें रोनेका,
मैं प्रभुकारण मिट जाऊँ।

अपमान सहनका मान जो है,
कुछ ना जाननका ज्ञान जो है,
इक आग बनी-सी जान जो है—
यह वर मैं तोसे पाऊँ।

हरि मीराके सिर हाथ धरो,
हूँ जैसी भी मैं—अपनी करो,
हरि नामसे मेरी झोलि भरो—
मैं गोविंद गोविंद गाऊँ॥

(७३)

मैं जित देखूँ—तू ही तू है, जित देखुँ कन्हाई तू!
तू बैरी भी है, सखा भी तू, निंदक तु, सहाई तू॥

मुसकान अधरपे भी तू है, है हृदयकि पीर भी तू।
तू मिलनानंद है सुधाभरा, विरहाका तीर भी तू॥

तू दिवसराज भी, रैन भी तू, धूली भी, जल भी तू।
तू अमर ज्योति है, काल भी तू, तू शती भी पल भी तू॥

तू तिरलोचन शिवशंकर भी, भवतारिणि माता तू।
तू ब्रह्मा विष्णू नारायण है, जगतविधाता तू॥

तू पुरुषोत्तम, परमेश्वर तू, रघुपति रघुराई तू।
मैं जित देखूँ—तू ही तू है, जित देखूँ कन्हाई तू॥

तू सद्गुरु नानक, महाप्रभू है, नंदका लाल भी तू।
तू कंसविनाशक मथुरापति, गोकुलका ग्वाल भी तू॥

तू सत, चित् भी, आनंद भी तू, छलिया चितचोर भी तू।
तू राधाका मनमोहन है, प्रभु नंदकिशोर भी तू॥

तू मीराका चिरप्रीतम है, प्रेमी, सौदाई तू।
मैं जित देखूँ—तू ही तू है, जित देखूँ कन्हाई तू॥

(७४)

मची है धूम गोकुलमें बधाई है, बधाई है !
है आनंद नंदके आँगन बनी नंदरानि माई है !

खड़ी गोपी है दरशनको वह बालक जान आई है।
न जाने है—यह बहुरूपी नई लीला रचाई है।
है जगपालक बना बालक यह बेबस होके मुस्काया।
है दुखभंजन यह चितनंदन हरन दुख ताप है आया।
मधुर मुस्कान देखनको यह आई सब लोकाई है।
मची है धूम गोकुलमें, बधाई है, बधाई है॥

सखी इन ही दो नैनोंसे है करुणाकी सुधा बहती।
कमल चरणोंमें इसके ही त्रिलोकी शकति है रहती।
खिलौना जिसका सूरज है, जो खेले चाँद तारोंसे,
वह बृंदावनमें खेलेगा रि गोकुलके दुलारोंसे।
निरख सुख पा रही राधा वह फूली ना समाई है।
मची है धूम गोकुलमें, बधाई है, बधाई है॥

कहती मीराः "चल रि सखी चल! हम भी हरिदरशन पावें।
जिससे तन मन धन पाया—यह जीवन उसको दे आवें।
धन है यशोदा आज सखी ही, धन धन है सब ब्रजबासी!
धन है राधा, धन धन हो कर नाचेगी मीरा दासी।
धन है गोकुल, धन है यमुना, जिस तट रास रचाई है।
आज सखी फिर धूम मची है, घर घर भई बधाई है॥"

(७५)

गोकुलकी इक बात पुरानी...
आज सखी, फिर अमर कहानी...
याद आई...याद आई।

डाइन सी थी काली राती...
नागन सी यमुना वल खाती...
घटा ग़रजती हिये डराती...
दामिनि दमके...बरसे पानी...
याद आई...याद आई...

रात ऐसीमें वह आया धरणीका मेहमान हो...
देवकीका लाल वह वसुदेवकी थी जान वह...
माँ यशोदाका वह प्यारा नंदका था मान वह...
जगमें फिर जगदीशकी लीला निराली थी रचानी...
अमर सजनी वह कहानी, रैन गोकुलकी पुरानी...
याद आई...याद आई।

वने गोपाल फिर हरी धेनू चराये वनमें जा...
चुराये चोर सखियोंकी लगी कमल चरणासे आ...
राधासे रीत प्रीतकी आ सीखि इस सजनने आ...
चरणाकि धूलि जो बनी हुई हृदयकि रानि वह...
है याद आति वह कथा मधुर सखी कहानि वह...
याद आई...याद आई।

जय मनमोहन मुरलीधारी !
जय राधा जय गोपी प्यारी !
जय यमुना वृंदावन बारी !
कुंज गली मीरा मनभानी...
याद आई...याद आई !

(७६)

जोगिनका कर भेष आज मैं
चली हरीके देश आज मैं...
देश हरीके आज।
हरीमिलनकी आश सखीरी,
मन दरशनकी प्यास सखी री...
मिले कभी महाराज!

तात मात सुत नाते छूटे,
मैं मेरीके बंधन टूटे
छूट गया संसार...
नहीं अब कोई रोकनहार...
सखीरी! बिसर गयी घरकाज।
चली मैं देश हरीके आज॥

गहना गल माला सुमिरनकी,
टीका धूली संत चरणकी
प्रेम बना सिंगार।
हुआ है स्वास स्वासका तार
बजेगा हृदयबीनका साज।
चली मैं देश हरीके आज॥

मीरा जनम जनमकी दासी,
आन मिलो बृंदावनवासी!
बैरागिन कर भेष चली मैं
आज हरीके देश चली मैं...
देश हरीके आज॥

(७७)

अँखियाँ लगीं न सारी रात,
गिन गिन तारे भइ परभात,
नहिं घर साजन आये जी।
गगनमें आइ कुमारी भोर,
चोली लाल किरणकी डोर,
देख किसे शरमाये जी।

पलभर बैठी दिलको थाम,
पर न वरण आये घनश्याम,
फीकी पड़ कुम्हलाये जी।
मीरा जनम जनमकी दासी,
गोविंद बैठी दरशन प्यासी,
मन हरिनाम धियाये जी।

मंदिर शंख बजे हैं दूर,
थक कर दिवसपती हुए चूर,
धरणी अंक लगाये जी।
मीरा निसदिन साँझ सकारे
गोविंद गोविंद श्याम पुकारे,
अजहुँ न दरशन पाये जी।

मोहन ऋतु आये ऋतु जाये,
मीरा गोविंद गोविंद ध्याये,
मन हरि याद सताये जी।
गोविंद गोविंद गोविंद बोल
मीरा नाम बड़ा अनमोल
बिगरी सारि बनाये जी।

(७८)

मैं भी दरपे ठाड़ी प्रभुजी, मैं भी दरपे ठाड़ी।
नाथ ही तुम प्रभु, दीन हुँ मैं, हे पतितसखा गिरधारी !

करुणासागर नाम है तेरा,
बड़ा तिसाया प्रभु, मन मेरा,
दरशन बिन यह धीर न माने, लाख यतन कर हारी।

धनदौलत सुख मान न चाहूँ,
शक्ती मुक्ती ज्ञान न चाहूँ,
कुछ नहिं चाहूँ, दरशन चाहूँ, दरशन दो बनवारी !

भूल गई अब भली बुराई,
लोकलाज तज बनी सौदाई,
जिया न जाये, मरा न जाये, पल पल हो गया भारी।

सब जग छोड़ मैं तेरी होई,
तुम मेरे अब और न कोई,
भगतबछल तुम काहे कहाओ ? कहाँ हो मेरी बारी ?
भगतबछल तुम काहे कहाओ ? लाज न आये मुरारि ?

(७६)

मेरा मान सारा निकाल कर,
मुझे हर तरहसे कंगाल कर,
ओ करनेवाले! है जो किया
वह भला किया, है भला किया॥

मेरा चैन सारा हि छीन कर,
मुझे हर तरहसे अधीन कर,
ओ करनेवाले! यह भी किया
तो भला किया, है भला किया॥

मेरी रैनकी निंदिया गई
मेरि जान सूलिपे आ रही,
नहिं सुख रहा न हँसी रही,
तेरि प्रीतमें न है क्या सही!

ओ करनेवाले! जो भी किया
है भला किया, है भला किया॥

मुझे इतना ही वर श्याम दो:
समय अंत आ मुझे थाम लो:
उस वेले मुख हरिनाम हो
घनश्याम हो, घनश्याम हो!

ओ करनेवाले! जो भी किया
है भला किया, है भला किया॥

(८०)

तु ने तोड़ सब ही सहारे मेरे
किया है कैसा युँ बेसहारा।
उठाये तूफाँ ये कैसे तू ने
रहा न कोई कहीं किनारा!

मगर किया जो बेहाल तू ने
तो दिलने फिर भी तुझीको पाया!
भँवरमें मँझधारमें घटामें
जहाँ है देखा तू नज़र आया!

मुझे हर ढंगसे अनाथ करके
अधीन निर्बल तू ने बनाया।
जो मिट चुके तेरे नामपे हैं
उन्हें मिटाया तो क्या मिटाया!

है दुख तुम्हारा, है सुख तुम्हारा,
है प्राण आशा यह तन तुम्हारा।
सभी तुम्हारा, सभी तुम्हारा :
यह तन तुम्हारा, यह मन तुम्हारा।

जनम मरणमें तुम्हीं हो मेरे
तुम्हें सब रंगोंमें मैं ने पाया।
तभी तो मीराने बावरी हो
हरी हरी गुण गोबिंद गाया!

(८१)

जो मन दे दिया बनवारीको, वह मन अपना कहलाये क्यूँ ?
जो दिल है 'तेरा' हो बैठा, उस दिलमें 'मेरा' आये क्यूँ ?

क्या सोच रहा क्यूँ रोता है ? वह पाता है जो खोता है।
जिन प्रीत कि रीत नहीं जानी, वह पी को मिलना चाहे क्यूँ ?

सौदा ना कर, तू दाम न कर, तन मन धन हरिचरणोंमें धर।
तू त्यागसे अपनी झोली भर, याचक बन कर फैलाये क्यूँ ?

कहती मीरा : "सुन रे प्राणी ! छोड़ी ना अब भी मन मानी।
जब सीस हाथपे धरा नहीं तो प्रेम गलीमें आये क्यूँ ?

(८२)

रहा न कोई बैरी अपना, रहा न कोई मीत।
फीके पड़ गये बंधन जगके हार रही ना जीत॥

निंदा करे सो भला सखी री, ना कुछ देवे पावे।
हलकी हो प्रभु ओर चली मैं—निंदक भार उठावे॥

नैनाँ हरिदरशनके प्यासे, सूझे ना कुछ और।
मन मेरा बैरागी, प्रभु बिन कहीं न पावे ठौर॥

अपने कहें दिवानी मीरा, लोग कहें कुलनाशी।
लाख कहें मोहे एक न लागे, मैं हरिचरणन दासी॥

लोक लाज जब छोड़ी जगकी—रही न रीत कुरीत।
बैरी मीत रहा ना को—जब प्रभुसंग लागी प्रीत॥

(८३)

झूले नंददुलाल ! झुलनिया ! झूले नंददुलाल !
निरख निरख सुख पाये यशोदा, झूलन दे गोपाल !
झुलनियाँ ! झूले नंददुलाल !

दरशनको आये नर नारी,
जावत हैं सखियाँ बलिहारी !
देख भई राधा मतवारी, नंदाजि चूमे गाल।
हरी बने गोपाल ! झुलनिया ! झूले नंददुलाल !

देवकिकी आँखोंका तारा
झूलनमें यह बालक न्यारा !
नंदित हो कहता जग सारा : "भकतबछल किरपाल
हरी बने गोपाल ! झुलनिया ! झूले नंददुलाल !

नयन कमलदल छवी नियारी,
मोहनि मूरत प्यारी प्यारी,
झूम रही है सृष्टी सारी, झूम रही हर डाल।
हरी बने गोपाल ! झुलनिया ! झूले नंददुलाल !

कहती मीरा : "सखीरि, आना !
नाचत गावत हरी धियाना
हृदिवृंदावन दरशन पाना तोड़के माया जाल।
हरी बने गोपाल ! झुलनिया ! झूले नंददुलाल !

(८४)

मिला तुमसे जो है प्रभुजी, कहो कैसे वह दिखलाऊँ ?

दिया तुमने जो इस दिलको—वह किस दिलको मैं बतलाऊँ ?

तेरे कारण सहूँ अपमान ऐसा मान देना जी !

न तुम बिन ज्ञान रह जाये वही इक ज्ञान देना जी !

दे बल—निर्बल अधीन हो कर तेरे चरणोंमें जाऊँ मैं ।

दे इक आशा—सभी आशा तेरे कारण मिटाऊँ मैं ।

वह क्या जाने कि इन नैनोंसे सुखकी धार बहती है ।

वह क्या जाने कि पीड़ित तनमें शांती मनकि रहती है ?

तेरे कारण बने निर्धन तो धन क्या पास आता है,

तेरे कारण सभी तजके रतन कैसे वह पाता है !

न वैरी मीत है अपना, न अपने न पराये हैं ।

जगत सब पा लिया उसने चरण जो तेरे पाये हैं ।

कहे मीरा : " हरी ! करुणा कोइ ये कैसे पहचाने ?

मिले जिस तन वही जाने, या देनेवाला तू जाने ॥

(८५)

तुम संग ऐसी बनी प्रभूजी, ऐसी बनी हमारी।
तोड़ सकूँ ना, छोड़ सकूँ ना यह बंधन गिरधारी !

ज्ञान न जानूँ, ध्यान न जानूँ, गुण साधन नहि कोई।
प्रेमभजन बिन कछु नहि जानूँ—प्रेमदिवानी होई।
निसदिन नाम तिहारा गाऊँ—देखूँ बाट तिहारी।

राजमहलकी करूँ न आशा, घर दर माँगूँ नाहीं !
चाव है तुम संग श्याम मिलनका प्रेम गली मैं आई।
मीराके प्रभु आन मिलो अब आन मिलो बनवारी !

ना मैं जोगिन भेष बनायो, ना मैं जाऊँ वन वन।
जित बैठूँ मैं तेरी प्रभुजी, तेरा ही है तन मन।
दुख सुख तुम बिन और न सूझे, जनम मरण मैं तिहारी।

तुम संग लाखों नाते मेरे, प्रीत यह बडी पुरानी।
युग युग यह दुहराई प्रभुजी मैंने प्रेम कहानी।
कैसे छोड़ूँ तोहे बोलो बोलो हे बनवारी !

(८६)

तुम बिन मेरी कौन करे प्रभु, कौन करे प्रभु मेरी ?
जनम मरण दुख सुखके साथी, मीरा दासी तेरी ॥

तुम ही मेरे तात मात प्रभु, तुम ही बंधू भाई।
तुम ही ठाकुर, तुम ही स्वामी, तुम ही संग सहाई।

तुम ही तुम हो सब प्रभु मेरे, प्रीतम प्राण पियारे।
तुम मेरे तो सब जग मेरा, कोई न बिना तुम्हारे।

मीरा आई शरण तिहारी, रख चरणकी चेरी।
तुम बिन मेरी कौन करे प्रभु, कौन करे प्रभु मेरी ?

तुम ही लोकलाज मर्यादा, तुम ही मान बढ़ाई।
नाथ अनाथके तुम हो प्रभुजी, धन निर्धनके कन्हाई।

जो तू करे—भला मैं मानूँ—जो देवे मैं पाऊँ।
तोहे बिसार मैं जीऊँ नाहीं, पल पल तुझे धियाऊँ।

मीराके प्रभु गिरधर नागर! आओ, करो न देरी।
तुम बिन मेरी कौन करे प्रभु, कौन करे प्रभु मेरी ?

मेरे तो प्रभु एक तुम्हीं हो, तुम बिन और न कोई।
मीरा लागी शरण तिहारी—होनी थी सो होई।

जग रूठे, प्रभु, तू नहिं रूठे, युग युग मीरा गाये।
मीरा माँगे चरण तिहारे, जग आये या जाये।

मीराके प्रभु परम मनोहर, मैं तो दासी तेरी।
तुम बिन मेरी कौन करे प्रभु, कौन करे प्रभु मेरी ?

(८७)

हम घर साजन आये सखी, साजन घर आये हमारे !
मैं नैन मूँदके सोय रही, हरि आँगन खड़े पुकारे !

पलकोंसे मैं दूँगि बुहारी, पथपर नैन बिछाऊँ।
कमल चरण अँखियन जल धोके आसन हृदय बनाऊँ।
माला बाहोंकी चरणोंमें डालूँ नाथ, तिहारे ॥

नेमकि आरति, त्यागकि पूजा, प्रेमका करूँ सिंगार।
हरी नामके मोती होंगे स्वास स्वासका तार।
मेरे तो धन श्याम तुम्हीं—क्या लाऊँ तेरे द्वारे ?

सुधबुध भूली पाके दरशन, हुई मैं बावरि जैसी ?
तुम घर प्रभुजी आये हो—तुम कैसे हो, मैं कैसी !
मीराके प्रभु गिरधर नागर ! मोहन माधव प्यारे !

(८८)

सखी रि, मैं तो साजन पायो, पायो मैंने मुरारी !
मोल लियो है, तोल लियो है, जाँच लियो गिरधारी !

छलसे बलसे पायो नाहीं, धनसे नहीं यह पायो।
हृदय तराज़ू बाट नामका, प्रेमसे दाम चुकाय।
बटवारेमें मिला है मोहे आपा दे बनवारी ॥

वेद पुराण मैं जानूँ नाहीं, गई न तीरथ मंदिर।
सखी रि, मैं तो साजन पायो अपने ही मन अंदर।
लोग कहें तिरलोकपती—मैं देखूँ प्रेमभिखारी।

गुण अवगुण वह परखे नाहीं, ऊँच नीच सम भावे।
बालक हो जिन पिता पुकारा, दास बने हरि आवे।
मीराके प्रभु गिरधर नागर जनम जनम बलिहारी ॥

(८६)

हे गोपाल, नंदलाल, कृष्ण, हे कन्हाई !
दीन मैं, दयाल तू, मैं शरण तेरि आई।

राजकाज लोकलाज साज छोड़ सारे।
तात मात मीत भ्रात साथ तोड़ प्यारे :

जगसे प्रीत तोड़ श्याम तोसे है लगाई।
प्रीत करूँ, रीत प्रीतकी नहीं है पाई।

ज्ञान ध्यान मैं अनजान जानुँ नहीं कोई।
सुनके नाम मैं गुणधाम श्याम तेरि होई।

लाख लाख दोष मेरे देख ना कन्हाई !
भगतवछल नाम तेरो सुनके शरण आई।

लाख दोष मीराके तू देख ना कन्हाई !
एक गुण अमोल मेरो—तेरि हूँ कन्हाई ॥

(९०)

भक्तनके मुख ओर है तेरे—मुख है तेरी ओर।
राजन मंदिर बाँध रिझावे,
ज्ञानी ऊँचे ज्ञान सुनावे,
योगी सिद्धी बल दिखलावे—करता तपस कठोर ॥

भक्तनको भगवान पियारा,
भक्तनका इक प्रेम सहारा,
हम बालक तू पिता हमारा गुरुचरणनकी ठौर ॥

लाखों नदियाँ, लाखों नाले,
दिशा निराली, नाम निराले,
सब ही सागरके मतवाले; चले हैं सागर ओर ॥

मीरा ज्ञान ध्यान ना चाहे,
निसदिन " गोविंद गोविंद " गाये,
युग युग दासी श्याम कहाये—वर दे नंदकिशोर ॥

(६१)

कहो तो सखी! कौन संध्या सकारे
"हरी बोल हरी बोल"—निसदिन पुकारे?
गलीयोंमें ब्रजकी यह यमुना किनारे
"हरी बोल हरी बोल"—निसदिन पुकारे!

भिखारिन कहे को, कहे कोइ रानी,
पुजारिन कहे कोइ, कोई दिवानी,
हरी प्रेममें यह जगतको बिसारे
"हरी बोल हरी बोल"—निसदिन पुकारे!

न हाथोंमें कंगन, न माथेपे टीका।
यह व्याकुल बनी पथ तके नित किसीका?
गिने दिनमें पल पल गिने रात तारे!
"हरी बोल हरी बोल"—निसदिन पुकारे!

सदा प्रेमधारा है नैनोंसे बहती,
"न मेरा, न मेरी, सभी तेरा" कहती,
"वही मेरे बंधू जिन्हें श्याम प्यारे"!
"हरी बोल हरी बोल"—निसदिन पुकारे!

"न ज्ञानी न ध्यानी, तपी ना उदासी,
हरीकी मैं मीरा हरीचरण दासी,
सखा तुम, पिता तुम, पती तुम हमारे।
"हरी बोल हरी बोल"—निसदिन पुकारे!

"मिला जग सभी जो हुए श्याम मेरे,
मैं माँगूँ हुँ युग युग चरण नाथ तेरे,
न शक्ती, न मुक्ती, चरण चाहुँ प्यारे!"
"हरी बोल हरी बोल"—निसदिन पुकारे!

(९२)

तेरि मिट जाये सब शंका चिंता, नाम हरीका बोल।
तू छोड़ दे अब मनमानी प्राणी जो सुख लेना मोल॥

काहे करे तू हीले हाले,
झूठी मायाके मतवाले !
पीले प्रेम पियाला प्राणी हरी नाम अनमोल॥

खोज रहा क्या—क्यूँ आया है,
क्या पाना था—क्या पाया है,
जीवन धन तो दूर नहीं है, मनकी आँखें खोल॥

कहती मीरा : "सुन रे भोले !
जो मुख राधे गोविंद बोले,
कोटी तीरथ दान समान वह हरी नाम अनमोल॥"

(९३)

सुन रि सखी तोहे आज कहूँ मैं कैसे साजन पाये।
योगी ऋषि जिस सुखको तरसें मैं अब्ला वह रिझाये।

एक तंत्र ही, एक मंत्र ही, इक ही साधन जाना।
तपी गुणी भगवान कहें जिसे मैं अपना कर माना।
बन बन खोजें जिसे बैरागी वह मेरे घर आये॥

वेद पुराण न पढ़े सखी री, तप साधन नहिं कोई।
जो हरि किया भला मैं माना शरणागत मैं होई।
ज्ञानी जिसका अंत न पायें मेरे मन वह समाये।

हरि की गति मैं कैसे जानूँ, अंबर वह मैं पाखी।
मैं चरणों में जाय पड़ी हरि अपनी जानके राखी।
बालक बन जिन रो रो बुलाया—बेबस हो हरि आये।
प्रेम में मीरा रो रो पुकारी व्याकुल हो हरि आये॥

(६४)

कभि ऐसे दिन भी आते हैं,
जब जगके सुंदर रंग ढंग सब फीकेसे पड़ जाते हैं॥

कभि ऐसे दिन भी आते हैं,
जब सुख धनकी झंकार सभी,
जोवनके राग बहार सभी,
जीवन वीणाके तार सभी बेसुरेसे कुछ सुन पाते हैं॥

कभि ऐसे दिन भी आते हैं,
जब हारसि लगती जीत सभी,
जब भारसि लगती प्रीत सभी,
जब बंधू बेली मीत सभी — अपने न पराये भाते हैं॥

कभि ऐसे दिन भी आते हैं,
जब इक बिसरीसि कहानी आ
मनमें इक याद पुरानी आ
दृती सोयासा प्रेम जगा — मन प्राण जिसे अपनाते हैं॥

कभि ऐसे दिन भी आते हैं
ना भली बुराई जब रहती,
रसना हर स्वास हरी कहती,
नैनोंसे प्रेम सुधा बहती — तब हरिजी शरण लगाते हैं॥

(६५)

तुम नित ही हमें बनाया करो !
चरणों में पड़ी मैं रोया करूँ
तुम शांत खड़े मुस्काया करो ॥

मैं चुन चुन नैनों के मोती प्राणों में पिरो कर लाउँ हरी !
जीवन के करके अंगारे मैं प्रेमका दीप जलाउँ हरी।
तन मन धन करके अर्पण मैं शरणागत होने आउँ हरी।
तुम पासभि रहकर दूर रहो—फिर क्यूँ नित पास बुलाया करो !
तुम नित ही हमें बनाया करो ॥

जादूकि बजा के मुरली तुम मनमोहन राग सुनाते हो।
है प्रीत बिसर जाती दूजी जब अपनी प्रीत जगाते हो।
जीवन में सपना बन आते फिर जीवन सपन बनाते हो।
मन में दरशन की प्यास लगा फिर दरशन को तरसाया करो ॥
तुम नित ही हमें बनाया करो ॥

जग कहता प्रतिमा तुम इक हो, मन कहता नाथ हमारे हो।
बेजान नहीं, हो जान मेरी, तुम जनम मरणके सहारे हो।
गिरधर नागर गोपाल हो तुम, मनमोहन प्रीतम प्यारे हो।
चुप रहना चाहो चुप हि रहो, युग युग तुम निठुर कहाया करो।
मीरा ने ले ली तेरि शरण—ज्यूँ चाहो मिटाया बनाया करो।
तुम नित ही हमें बनाया करो ॥

(६६)

कहो उधो, यह तो कहो :
कि एक बार फिर हरी
यह सूने वृंदावनमें फिरसे आयेंगे,
सदा न नैन तरसेंगे
वह एक बार दरस फिर भि पायेंगे॥

सपन वह सुख के दिन व रातें हो गई,
हरी गये हमारि नियति सो गई,
उदासि कुंज कुंज देखो छा रही,
कली कली बेहाल हो बुला रही,
कहो उधो यह तो कहो :
कि एक बार तो हरी वसंत सूखे कुंज फिर भि लायेंगे॥

अधर पे बाँसरी लिये कदम तले
चपल चरण हरीका आना—दिन ढले,
वह ग्वाल बाल गोपियोंकि टोलियाँ,
वह कुंज कुंज पंछियोंकि बोलियाँ,
कहो उधो, यह तो कहो :
कि एक बार लौटके ये बीते दिन ये मधुर सपन आयेंगे॥

कहो उधो हरीसे जा कहो यही :
कहानि बन न जाये प्रीत यह कहीं,
सकोगे तोड़ नाता हमसे तुम नहीं,
जनम जनम तकेंगे पथ हरी यहीं।
कहो उधो, यह जा कहो :
कि एक बार तो हरी तुम्हें हम प्रेमबलसे फिर बुलायेंगे॥

(६७)

आज प्रभु-घर आयेंगे रि सखी, मैं मोहन आज बुला लूँगी।
जो लाख यतन ना जींत सकी, सब हारके वह अब पा लूँगी॥

अब सूख गये नैनाँ री री, अब सावनसे बरसेंगे नहीं।
अब दरशन पा लेंगे उनका, पा जिनको फिर तरसेंगे नहीं।
अब बल छल छूट गयो रि सखी, अब बल मैं श्याम बना लूँगी।

अब व्याकुल मन नहिं तरसेगा, अब दुख मिट जायेंगे सारे।
अब दरश-सुधा पी कर शांती पा लेंगे-मनके अंगारे।
अब अपना पराया कोइ नहीं, मैं प्रभुको अपना बना लूँगी।

अब रह न सकेंगे दूर हरी मीरा-घर आना ही होगा।
युग युग जो नाम है भकतबछल—ये नाम बचाना ही होगा।
मीरासे कुछ भी हो न सका, मैं प्रभुसे सबहि करा लूँगी।

(६८)

जिस मनने ली है तेरि शरण, वह शरण बिगानी चाहे क्यूँ?
जिस दिलने देख लिया तुमको, उसे विरहा अगन जलाये क्यूँ?
जिन नैननकी हो ज्योती तुम,
जिस हृदय सीपका मोती तुम,
जिसका सुख चैन तुम्हीं हो प्रभू, उसे चिंता शोक सताये क्यूँ?
जिस नैयाके पतवार हो तुम,
जिस जीवनका सिंगार हो तुम,
जिस प्राणीके प्रभु प्राण तुम्हीं, वह शंका भय अपनाये क्यूँ?
जिस वीणाके तुम गीत हरी,
जिस प्रेमीके तुम मीत हरी,
जिस निर्धनके धन मान तुम्हीं, वह झोली ख़ाली पाये क्यूँ?
जिस मीराके तुम हो स्वामी,
जिस अंतरके अंतरयामी,
जिसके तुम हो, प्रभु और न हो, वह नाथ, तुम्हें बिसराये क्यूँ?

(९९)

रोम रोम हरि नाम बसे हो स्वास स्वास गुरु बासा।
अंग अंग प्रभु संगको तरसे छूटे आश निराशा॥
रैनमें जागें नैन अभागे, दिन छिन छिन गिन जाये।
जीत हार दूँ तुमपे वार मैं, तुम बिन कल नहि आये॥
दुखमें सुखमें भेद रहे ना, तन मन कर दूँ अर्पण।
राज काज भी लोक लाज भी लाऊँ तेरे चरणन॥
प्रेम-धनुकसे तोड़ दे दूई काट दे श्याम अँधेरा।
मोहन मीरा इक हो जायें रहे न तेरा मेरा॥

(१००)

तुम्हरे कारण भई गती यह, अब मोहे काहे सताओ?
विरह बिथा प्रभु, सहि नहिं जाये, आओ शरण लगाओ॥

सब जग छूटा तुमरे कारण
गलियन गाऊँ बनी भिखारिन
दुख सुखके हरि नाथ हमारे, अगनी आन बुझाओ॥

जनम मरणके नाथ हमारे!
तुम बिन प्रभुजी कौन सँभारे?
तुम बिन लगी कोइ नहिं जाने पीड़ा आन मिटाओ॥

मैं निर्गुण, गुण एक न जानूँ,
नाम बिना मैं टेक न जानूँ,
जनम जनमकी दासी मीरा अपनी जान उठाओ॥

भकतवछल दुखभंजन स्वामी,
घटघटके हरि अंतरयामी,
हृदय चीर देखो मीराका गोविंद गोविंद पाओ॥

(१०१)

तू बोल हरी हरि बोल रे मन तू बोल हरी हरि बोल।

सुमिरन कर ले राम राम तू,
मनमें धर ले श्याम नाम तू,
नामकि नैया हरी खिवैया भवसागर ना डोल॥

नाम भजन कर साँझ सकारे,
कट जायेंगे बंधन सारे,
हरी नाम अनमोल रे प्राणी, प्राणोंके संग तोल॥

हरी कहो नित हरी धियाओ,
कहती मीरा चिरसुख पाओ,
यह धन बाँटनसे बढ़ जाये, दे दे झोली खोल॥

(१०२)

मत कर बंद दुआर पुजारी, मैं तो दरशन पायो नहीं।
कबसे ठाड़ी दरपर मैं तो अजहूँ नाथ बुलायो नहीं॥

गुणहीन समझ क्या छोड़ गये!
कहो, दीन समझ मुख मोड़ गये!
अर्पण करनेको लाई तनमन तोहि तो फूल चढ़ायो नहीं॥

नहिं ज्ञान, मैं बोल सुनाउँ हि क्या?
नहिं रूप, मैं श्याम रिझाउँ हि क्या?
मेरा प्रेम में अंग अंग सुलग रहा, तोही तो दीप जलायो नहीं॥

मोहे प्रभुसे और तो आश नहीं,
मीराको चरण बिन प्यास नहीं,
रुक जा, नहिं बंद कर द्वार, अभी मैं दरशका अमृत पायो नहीं॥

(१०३)

अब चल बस देश गोपालके मन!

हरिचरण कमल संग लग जावें।

अब छोड़ सकल जंजाल रे मन,

हरिनामका अमृत पा·आवें॥

यह काम न पूरे होंगे कभी,

रह जायें अंत अधूरे सभी,

जो सर्वकलापूरन है मन, अब शरण उसीकी चल पावें॥

धन जोड़नमें सब उमर गई,

तृष्णाकी झोली ख़ालि रही,

अब कर अभिलाषा उस धनकी—जो पा सुखका मंतर पावें॥

ये तात मात बंधू तेरे,

कहता जिनको मेरे मेरे,

ये अपने सुखके हैं साथी, ये अंत न काम कोई आवें॥

अब चल यमुनाके पार वहाँ

है बसा नया संसार जहाँ

जो अपना है अपना कर ले, मनमानी तज उसे अपनावें॥

मन रे! कैसी यह चतुराई?

ज्योती तज छाया अपनाई!

सुन कहती मीरा: "बीत गये दिन, अब चल हरि दरशन पावें॥"

(१०४)

दरश बिना यह दिन गया है साँझ हो गई सखी,
है साँझ हो गई।
तिसाइ अँखियाँ भोरकी निराश हो रही सखी,
निराश हो रही॥

विफल यह दिन भि जा रहा,
अँधेरा मनपे छा रहा,
हरीने सार ली नहीं, न कुछ सुनी कही सखी,
न कुछ सुनी कही॥

गया न मनका मानही,
गये न तनसे प्राणही,
गँवाके दिन हरी बिना मैं बावरी भई सखी,
मैं बावरी भई॥

कहे यह मीरा श्याम रो:
"हे नाथ अब तो आ मिलो
बिना दरश न भोर हो, न जाये अब सही सखी,
न जाये अब सही।"

(१०५)

सुन सखी, मुरली बुलाये!
अब न रोकनहार कोइ आँगना घनश्याम आये।

प्रेम गाथा कौन जाने?
लागि जिस तन वह हि माने।
प्रेम करने से बने ना यह बनत वह ही बनाये।

काहे की अब लाज री सखी?
कैसा घर धन काज री सखी?
जिसको वह अपनाने आया उसके क्या अपने पराये?

सुन सखी, मुरली बुलाती:
"आ जा मीरा आ जा"—गाती!
सोच कैसी देर काहे? प्रेमि सब खो सब हि पाये॥

(१०६)

तुम बिन सब दिन एक समान।
सेवा सुमिरनमें जो बीते
वह ही दिवस महान्॥

लाज भरी नितही अंबरमें आये कुमारी भोर:
लाल गाल है, नीली चोली बाँधी किरणकि डोर।
दिन आये जाये तो क्या—जो गया न मनका मान!
तुम बिन सब दिन एक समान॥

नव ऋतु आये, कुंजन महके नित सुख कोयल बोले।
सब बदले मन तू वैसे ही मोहमायामें डोले।
नितही चाँदनि राती भीजे रूपामें कर स्नान।
तुम बिन सब दिन एक समान॥

वह दिन भला जो तुझको अर्पण जब तेरे रंग राती।
हरि सुमिरनमें जो बीती है वही है रैन सुहाती।
मीरा जाने एक कन्हाई प्रभु ही जीवन प्राण।
तुम बिन सब दिन एक समान॥

(१०७)

मेरो वर घनश्याम रि माई, मेरो वर बनवारी।
हाथ पकर मैं लियो उसीका जाको नाम मुरारी।
मोल तोल मैं कियो नहीं, देखी ना भली बुराई।
संतनसे सुन शोभा मैं ने श्यामसे प्रीत लगाई।
जो सुख मिले रि हरिसेवामें—मिले न दुनिया सारी॥

दूजे हाथ बिकाऊँ कैसे—इक तन है इक जान?
बेच दियो सब ही इस आगे दुख सुख तन मन प्राण।
लोक लाज भी जनम मरण भी प्रभुचरणनमें वारी।
जाके गल बनमाल रि माई, नूपुर चरण सुहावे,
अधरपे मुरली, अंग पीतांबर, मेरो नाथ कहावे,
राजनका महाराज वह माई, भक्तनका वह पुजारी॥

(१०८)

जित बैठूँ, मैं तेरी प्रभुजी, जित बैठूँ, मैं तेरी।
तोहे बिसार जिऊँ नहिं पल मैं, जीवन जोत तु मेरी।
प्रभुजी, जित बैठूँ, मैं तेरी॥

कैसी प्रीत लगी तुम संग प्रभु, कुछ नहिं देखा भाला।
लोग कहें तुम जगपालक हो, मैं हूँ अबला बाला।
तेरा अंत मैं पाऊँ कैसे, गुण मैं क्या पहचानूँ?
मोहे तुम बिन और न सूझे, मैं तो इतना जानूँ।
बड़ी पुरानी प्रीत है तुमसे, भली बुरी मैं तेरी।
प्रभुजी, जित बैठूँ, मैं तेरी॥

प्रेमहि मेरा तप साधन है, प्रेमहि शकती युकती।
दुख सुख जनम मरणके साथी, तुम ही मेरी मुकती।
निराकार साकार न जानूँ, जानूँ एक कन्हाई।
अधर मुरलिया ले आओ गोपाल मिलन मैं आई।
वृंदावनके वासी मोहन, मीरा दासी तेरी।
प्रभुजी, जित बैठूँ, मैं तेरी॥

(१०६)

पूजाको पुजारिन आई हूँ, मैं बनके भिखारिन आई हूँ।

हूँ निर्बल मैं तुम नाथ मेरे !

दो छोटे छोटे हाथ मेरे !

मैं फूल चढ़ाऊँ कैसे ? तुम तक मैं आऊँ कैसे ?

यह हाथोंमें है हार लिया, तुम करुणा कर झुक आओ पिया !

हरि, तुमसे तो कुछ दूर नहीं,

तुम तो मुझसे मजबूर नहीं,

मैं हार पिन्हाऊँ कैसे ? तुम तक मैं आऊँ कैसे ?

ठाकुर ! मैं तो चेरी ही हूँ, हूँ जैसी भी तेरी ही हूँ।

तुम जो ना पास बुलाओ हरी,

नहिं चरनन संग लगाओ हरी,

तो शरण मैं पाऊँ कैसे ? तुम तक मैं आऊँ कैसे ?

मेरा सब मान तुम्हीं हो प्रभू ! गुण साधन ध्यान तुम्हीं हो प्रभू !

तुम बिन मेरी तो ठौर नहीं,

मीराका तो कोइ और नहीं,

मैं तुझे रिझाऊँ कैसे ? तुम तक मैं आऊँ कैसे ?

मीराके प्रभु अंतरयामी ! निर्धनके धन, जगके स्वामी !

घट घटके जाननवाले हो,

तुम भक्तनके रखवाले हो !

गुण तेरे गाऊँ कैसे ? तुम तक मैं आऊँ कैसे ?

(११०)

सखी यह कौन आता है, कहो यह कौन आता है ?

नहीं देता मुझे गाने वह सुखके गीत जीवनमें।
दिवस उज्ज्वल निशा काली—यही है रीत जीवनमें।
मगर हर कालि रातीके अँधेरे वह मिटाता है।
यह बनके भोर आशाकी कहो तो कौन आता है ?

वह देता तोड़ सब बंधन है करुणाकी कटारीसे।
लगन सब छूट जाती है युँ कुलसे सृष्टि सारीसे।
मगर कुछ तोड़के रिश्ते वह जग अपना बनाता है।
नहीं रहता पराया कोइ वह जब मनमें आता है।

लगी यह प्रीत है कैसी, सखा अनजान लगता है!
न जानूँ क्या है वह साजन हृदयके प्राण लगता है!
वह नैनोंसे हो ओझल मनके मंदिर आ बसाता है!
अधर मुरली, चरण नूपुर, सपनमें कौन आता है ?

बनाके लीलाके साथी वह खेले अँखमिचौनी है।
न छोड़ेंगे बिना ढूँढे, सखी होवे जो होनी है।
जनमसाथी मरणसाथी वह दुखसुखका विधाता है।
सखी ! मीराके जीवनमें वह जीवन बनके आता है॥

(१११)

कब तक खोल मैं द्वार हरीजी, पथपर नैन लगाये रहूँ ?
हाथमें ले पूजाकी थाली कबतक दीप जलाये रहूँ ?

मालकि कलियाँ सूखन लागी,
रो रो अँखियाँ दूखन लागी,
तुम जो दो नहिं आश प्रभू, क्या आश दे मन भरमाये रहूँ ?

कान ज़रासी धुन पाते हैं,
मन कहता है—प्रभु आते हैं !
तेरे आवन आवनमें मैं कबतक प्राण बचाये रहूँ ?

छूट गये सब दिनके साथी,
कब तक जलेगि जीवन बाती ?
तुम बिन पल पल मरके कब तक जीवनगीत मैं गाये रहूँ ?

तुम बिन प्रभुजी, रहा न जाये,
दुख सुख कुछ भी सहा न जाये,
मीराको प्रभु दरशन दो, मैं चरणन बीच समाये रहूँ ॥

(११२)

राम नाम सुखदायी भज मन दिन यह बीत न जाये !
इक दिन इक पल इक छिन करके मानव जनम गँवाये !

बालापन तो खेल गँवायो,
जोबनने फिर मन भरमायो,
छूट गयो जब बल छल सब ही, तब क्या नाम धियाये ।

देखन सुननमें जीवन बीता,
हार गये सब जो था जीता,
अंत समय तन माटीका यह माटीमें मिल जाये ।

मीरा कहती : " सुन मन धरके,
कल करना जो—आज हि कर ले,
आश लगाये बरसोंकी तू पलकी खबर न पाये ! "

(११३)

अब दरशन दो, प्रभु, दरशन दो, दरशन दो प्रभुजी, आओ !
सुनो नाथ, अनाथ समझ आओ, हूँ दीन, मुझे अपनाओ !

दिन कहते सुनते बीत गये,
थे निराश ये नयन निराश रहे,
इकबार तो करुणासागर इन नैनोंकी प्यास बुझाओ !

तुम पर तो मेरा ज़ोर नहीं,
पर तुम बिन प्रभुजी, और नहीं,
सिर मेरे दयाल, हाथ धरो, मो चरणन संग लगाओ !

तुम बिन सुख दुख हो समान गये,
वैरी न रहे, नहिं मीत रहे,
तुम बिन दिन रैन अँधेरे भये, आओ यह अँधेरा मिटाओ !

कहे मीरा : "हे नंदलाल ! सुनो :
दरशन दो, या अब प्राण हि लो !
तुम बिन है जीना मरना विफल, मेरा मरना जीना चुकाओ !"

(११४)

मुझे प्रभु, अपना तू कर ले।
अपना कर ले नाथ, मेरे सिर हाथ हरी, धर दे॥

चरणन संग तु जोड़ ले अपने, तोड़ दे मान तु मेरा।
करुणाका तू दीप जला—मिट जाये भरम अँधेरा॥

मैं हूँ दीन अनाथ पतित, तू पतितबंधु गिरधारी।
मैं चातक तू स्वाती बिंदू, मोहे प्यास तिहारी॥

तू ही मेरा ज्ञान ध्यान है, तू ही साधन पूजा।
तू ही सब है, मैं नहिं कुछ भी, तुम बिन और न दूजा।
मीरा हाथ पसारे नामसे झोली तू भर दे॥

(११५)

आज हरी मिलनकी रैन सखी, अब मिलन-रैन है आई।
जनम जनमकी बिगरी हमसे प्रभुजी आन बनाई॥

दूर कहीं सुन बजी मुरलिया·
रुमक झुमक आवे साँवरिया,
मोर मुकुट सिर, अंग पीतांबर, गल बनमाल सजाई॥

त्यागकि चोली, प्रेमका कजरा, गल माला सुमिरनकी,
हृदय दीप ले, जीवन बाती, अंजलि दूँ तनमनकी।
नैनन जलसे चरण धुलाऊँ आयेंगे जो कन्हाई॥

उछल उछल कहे यमुनाबारी।
"अब सुध लेंगे नाथ हमारी"।
कुंजन बनमें केहा नाचे अंबर बदली छाई॥

सेवा करूँ, रहूँ चरणन संग, कहीं न आऊँ जाऊँ।
दुख सुखकी भी कभी कहूँ ना, जो देवे सो पाऊँ।
मीरा दासी जनम जनमकी फिर हरिदरशन पाई॥

(११६)

सुन रि सखी, सुन मधुर मधुर धुन मनमोहन कहिं गावत है!
ठुमुक ठुमुक कर चपल चरण धर कृष्ण कन्हैया आवत है!
रुम झुम रुम झुम बजे पायलिया,
रास रचावत है साँवरिया,
कुंज कुंज तले झूम झूम चले रूप अनूप दिखावत है!
नाच नाच प्रभु तटपर घूमें,
उछल उछल यमुना पग चूमें,
रात रात भर यमुना घाट पर नटवर धूम मचावत है!
चल चल मीरा, बृंदाबन अब,
तोहे बुलावत है वह सजन अब,
रंग रंगसे लाख ढंगसे दरशन प्यास बुझावत है!

(११७)

कौन यतन प्रभु पाऊँ तोहे, कौन यतन प्रभु, पाऊँ ?
कैसी आरति, कैसी पूजा, कैसे फूल चढ़ाऊँ ?

यह क्या फूल चढ़ाऊँ प्रभुजी, पलभर में कुम्हलाये ?
हृदय कमल मैं करूँ समर्पण—जब देखो खिल जाये।
यह ना मेघ, न ओससे सींचूँ, अँखियन नीर पिलाऊँ।
तोहे कौन यतन प्रभु, पाऊँ ?

यह क्या दीप दिखाऊँ तोहे—जो इक दिनकी बाती ?
नयननकी ज्योती दूँगी प्रभु, जलेंगे ये दिन राती।
कायाका यह दीपक होगा, प्राणकि आँच लगाऊँ।
तोहे कौन यतन प्रभु, पाऊँ ?

ये मंदिर पत्थरके प्रभुजी, कुछ नहिं समझें बोलें।
मनमंदिरमें आओ ठाकुर, स्वास स्वास तोहे तोलें।
अंग अंग काट आहुति दूँगी—जीवन होम बनाऊँ।
तोहे कौन यतन प्रभु, पाऊँ ?

मीरा तो जाने प्रभु मेरे इक ही पथ पावनका।
प्रेमकि आरति, त्यागकि पूजा, नाम मंत्र गावनका।
जो तू करे भला वहि मानूँ चरणन संग लग जाऊँ।
तोहे कौन यतन प्रभु, पाऊँ ?

(११८)

मन नहिं माने धीर हरी बिन, राजा, मन नहिं माने।
कासे कहूँ यह पीर हृदयकी ? कौन यह दुख पहचाने ?

तुम घर राजा, माणिक मोती,
मन इक माँगे नामकि ज्योती,
यमुनातटकी धूली माँगे कुंजनवन यह सुहाने॥
मन नहिं माने धीर हरी बिना राजा मन नहिं माने।

हरि पानेको सब है खोया,
उस सुख कारण लाखों रोया,
मन जब राजा प्रभुका होया—लगा यह प्रभु अपनाने॥
मन नहिं माने धीर हरी बिना राजा मन नहिं माने।

वह पाये—जिन खोना सीखा,
वही हँसे—जिन रोना सीखा,
हार प्रेममें सीखी जिन—उन गाये विजय तराने॥
मन नहिं माने धीर हरी बिना राजा मन नहिं माने।

बिन साधन सब बंधन टूटे,
त्याग बिना सब सुख हैं झूटे,
छूट गयो संसार, पिया बिन अपने बने बिगाने॥
मन नहिं माने धीर हरी बिना राजा मन नहिं माने।

मैं नहिं राज करनको आई,
नाथ बिना मैं बनी सौदाई,
मीरा आई प्रेम भजनको—गोविंद गोविंद गाने॥
मन नहिं माने धीर हरी बिना राजा मन नहिं माने।

(११६)

शरण दो मुरारी! पिया, दो सहारा।
नहीं बिन तुम्हारे है कोई हमारा॥

मुझे बल दो निर्बल अधीन मैं कहाऊँ।
मैं सब आसरे छोड़ चरणोंमें आऊँ।
दो धीरज—बिना तेरे धीरज न पाऊँ।
दो बुद्धी—बिना तेरे सब बुध गँवाऊँ।
मैं दुख सुखमें नित नाम ध्याऊँ तुम्हारा।
शरण दो मुरारी! पिया, दो सहारा॥

मुझे शांति शक्तीकी आशा नहीं है।
चरण हैं जहाँ तेरे मुक्ती वहीं है।
जो सेवामें सुख है—नहीं वह कहीं है।
है मीराका जो स्वर्ग तो वह यहीं है।
विफल है जगत बिन तुम्हारे यह सारा।
शरण दो मुरारी! पिया, दो सहारा॥

मुझे नाथ चरणोंकि प्रीती सिखाओ।
मेरा मान अपमान सब ही मिटाओ।
कटारीसे करुणाकि दूई हटाओ।
लगा आग पीड़ाकि आपा जलाओ।
तिसाई है मीरा दो दर्शनाकि धारा।
शरण दो मुरारी! पिया, दो सहारा॥

(१२०)

सुन सखी री, कौन आया!

बंद कैसे द्वार तेरे—किसको आँगनमें बिठाया?

कैसे महलोंमें अँधेरे?

क्यूँ हैं नैनाँ लाल तेरे?

देख अँसुअनकी झलकमें कौन छिपकर मुस्कराया!

सब जगतको तू बिसारे,

किसको पल पल यूँ पुकारे?

सुन तो तेरी गूँजमें यह किसने सुरमें सुर मिलाया!

यह दशा किसने बनाई,

प्रीत किससे है लगाई?

देख तेरी वेदनामें किसकि पीड़ाकी है छाया!

पीकी क्या पहचान है री!

कौन यह मेहमान है री!

अधर मुरली, चरण नूपुर, मुकुट सिरपर है सजाया!

नाम उसका है मुरारी,

कहता—"हूँ प्रेमी पुजारी,"

बिन मिले ना जायेगा वह आश मिलनेकी है लाया!

(१२१)

सुन सखीरी, श्याम आया !
वेदनाकी रैनमें है दीप आशाका जलाया ॥

सुन सखी वह लय सुहानी,
मधुर मधुसी हृदयवाणी,
यमुना तट बीती कहानी,
वही मधुवनकी पुरानी
फिर सखी, वह याद लाया ॥

सुन सखी री, श्याम आया !
तृषित नैनों ने है अमृत फिर दरशका आज पाया ॥

रंगने आया अपने रंग वह,
लाया करुणा जल है संग वह,
होलि खेले लाख ढंग वह,
रंग देगा अंग अंग वह,
फिर तुझे खेलन बुलाया ॥

सुन सखी री, श्याम आया !
कह रहा है : " दे दे सब कुछ, जिसने खोया उसने पाया "॥

सुन सखी री, मुरलि गाये :
" आ जा मीरा, प्रभु बुलाये,
तेरे घर घनश्याम आये,
भाग सोये फिर जगाये,
जनम जनमका दुख मिटाया "॥

(१२२)

हमें दरसकि स्वाती बूँद बिना क्यूँ चातकसे तरसायें हरी !
क्यूँ छाँडी बृंदावन है उधो, क्यूँ नगरी और बसाये हरी !

मथुराके सुंदर महलोंमें हैं बसे कन्हैया कहते हैं ।
नंदलाल नहीं गोपाल रहे, अब राजा बनके रहते हैं ।
बनमाल नहीं बनमाली गल, हैं रतन मनोहर झूल रहे ।
वह साज सजाके राजनका क्या नूपुर भी हैं भूल गये ?
सिर मोर मुकुट तो है न उधो, मुरली तो नहिं बिसराये हरी ?

यहाँ स्वर्ण-सिंहासन नहीं उधो, पर प्रेमकि यमुना बहती है ।
हर ब्रजवासीके मनमंदिरमें प्रतिमा श्यामकि रहती है ।
यहाँ तेरा मेरा कोइ नहीं, सब तनमन धन हैं मुरारीके ।
हम प्रेमपुजारी गोकुलमें सब जाचक हैं बनवारीके ।
उन कारण सब जग छूट गया, अब छोड़ हमें कहाँ जायें हरी ?

यहाँ साँझकि वेला कदम तले श्रीराधा नाम धियाती है ।
मधुबनमें सखियोंकी टोली नित गोविंद गोविंद गाती है ।
हैं धेनू खोयी खोयीसी पंछीकि कूक है दरदभरी ।
कुंजनबन पवन है सिसक रही, कलियाँ भी खिलतीं डरी डरी ।
इकबार तो आयेंगे न उधो, इकबार कहो तो आयें हरी !

कह देना सब जाके प्रभुसे—तुम बिन तो हमारा और नहीं ।
कोइ आश नहीं अभिलाष नहीं, कोइ आसरा न, कोइ ठौर नहीं ।
हम भली बुरी तो जाने ना, हैं घट घट जाननहार प्रभू ।
इतनी विनती करना जाके—हम जियें न तोहे बिसार प्रभू !
मीरा पथ देखे जनम जनम मोहे कबहुँ तो दरस दिखाये हरी !
क्यूँ छाँडी बृंदावन है उधो, क्यूँ नगरी और बसाये हरी !

(१२३)

तेरी शरणमें लग हरी, कहीं मैं जाऊँ किस तरह ?
जीवन है याद इक तेरी, तुझे भुलाऊँ किस तरह ?

हृदयमें बास करके क्यूँ नयनसे दूर हो कहो ?
बसो गोपाल, नैनमें तुम इनकि जोत बन रहो।
दरसकि प्यास बिन दरस कहो बुझाउँ किस तरह ?
कहीं मैं जाऊँ किस तरह ?

न तात मात मीत हैं, न अपने ना पराये हैं।
कमल चरण मिलें जिसे, दो लोक उसने पाये हैं
हैं तोड़े साथ सब हरी, मैं तुमको पाऊँ किस तरह ?
कहीं मैं जाउँ किस तरह ?

मैं दीन, तुम दयाल हो, अनाथ मैं हुँ, नाथ तुम।
पड़ी हुँ अबला द्वारमें, उठाओ पकड़ हाथ तुम।
मीरा कहे आओ हरी—तुम तक मैं आऊँ किस तरह ?
कहीं मैं जाऊँ किस तरह ?

(१२४)

यह दिन भी सखि बीत गया री, श्याम नहीं घर आये !
मैं नहिं साजन देखे री, अजहूँ नहिं दरशन पाये !

मैं तो प्रभुका द्वार न जानूँ,
आर न जानूँ पार न जानूँ,
रीत न जानूँ प्यार न जानूँ, प्रभुसंग नैन लगाये।

धरम नहीं गुणज्ञान नहीं है,
सेवा साधन ध्यान नहीं है,
लोक लाज कुल आन नहीं है—मैं अबला असहाये।

किसबिध मैं री दरशन पाऊँ ?
गोविंद गोविंद नित ही गाऊँ,
पथकी धूली मैं हो जाऊँ—हृदयमें नाम बसाये।

मीरा दासी जनम मरणकी,
आश लगी है प्रभु दरशनकी,
प्यास बुझाओ इन नैननकी—रूप अनूप दिखाये ॥

(१२५)

तुम आओगे इकबार हरी, इकबार हरी तो आओगे।
मैं तेरी होके रहूँ प्रभू, इकबार तो तुम अपनाओगे॥

हर स्वास स्वास ले नाम तेरा, पल पल गिन दिवस बिताऊँगी।
रातोंको अंबरके तारे चुन चुनके हार बनाऊँगी।
मैं आशाकी कलियोंसे हरि, मनमंदिर नाथ सजाऊँगी।
राखूँगी हृदयका दीप जला, प्राणोंका शंख बजाऊँगी।
मैं द्वार खोल ठाड़ी हि रहूँ, इकबार तो दरस दिखाओगे।
तुम आओगे इकबार हरी, इकबार हरी तो आओगे॥

सपनेकि मुरली याद है जी, यह याद हृदयमें बसाये रहूँ।
यह सपना टूट न जाये कहीं, मैं जीवन सपन बनाये रहूँ।
मैं अपने पराये छोड़ हरी, इक तुम संग प्रीत लगाये रहूँ।
जग छूटे रुठे जाये रहे—मैं रुठे हरी मनाये रहूँ।
मैं जनम जनमकि तिसाई हूँ, इकबार तो प्यास बुझाओगे।
तुम आओगे इकबार हरी, इकबार हरी तो आओगे॥

मैं जानूँ ना—दरशन पाके मिट जाऊँगी बन जाऊँगी।
मैं बार बार मुख देखूँगी, नित गोविंद गोविंद गाऊँगी।
इकबार तो चाकर राखो जी, कुछ माँगूगी ना चाहूँगी।
मैं दुखसुखकी भी कहूँ नहीं—जो दोगे प्रभु मैं पाऊँगी।
मीराके प्रभु इकबार कहो, इकबार कहो तो आओगे।
मैं तेरी होके रहूँ प्रभू, इकबार तो तुम अपनाओगे॥

(१२६)

कितनी दूर है और खिवैया, कितनी दूर है जाना ?
(मथुरा कितनी दूर खिवैया, कितनी दूर है जाना ?)
लिये चला है आगे आगे—कितनी दूर ठिकाना ?

बीत गया दिन, आई राती,
छूट गये सब तटके साथी,
बुझ नहिं जाये जीवन बाती,
छोटीसी यह प्रेमकि नैया खेवक, पार लगाना ॥

मेघपतीने द्वार हैं खोले,
तूफ़ानोंमें नैया डोले,
तू मुसकाये, कुछ नहिं बोले,
अधर मुरलिया लिये बजाये काहे मधुर तराना ?

मैं अनजान, नहीं कुछ जानूँ,
खेवनहार है तू पहचानूँ,
जो तू करे भला वह मानूँ,
मीराके चिरसाथी, मोहन, ज्यूँ भावे अपनाना ।
मीरा डोरी तुम पर डाली, तुम ही भार उठाना ॥

(१२७)

सखि, सुन रि, सजन आयो मधुवन,
कुंजनवन आयो मुरारी।
वह प्राण हरण आयो, हरि बनठन आयो
चपल चरण बनवारी॥

मोर मुकुट सिर साजे, री सखि,
चरनन नूपुर बाजे, री सखि,
चरनन नूपुर बाजे !
मुरलि अधर सुन मधुर मधुर धुन
व्याकुल भये नरनारी, री सखि,
व्याकुल भये नरनारी॥

तटपर रास रचाये, री सखि,
कैसी धूम मचाये, री सखि,
कैसी धूम मचाये !
खेलत है होलि रंग भीज गयो अंग अंग
भीजी सखियाँ सारी, री सखि,
भीजी सखियाँ सारी॥

मीरा रह नहिं पाये, री सखि,
मोहन मुझे बुलाये, री सखि,
मोहन मुझे बुलाये।
कुंज गलि जाऊँगि, हरि हरि गाऊँगि,
केशव कुंजविहारी, माधव
केशव, कृष्ण मुरारी॥

(१२८)

शरणागत हैं, दीन हैं हम, प्रभु आये तेरे द्वारे।
हम ऐसे वैसे जैसे भी हैं—बालक नाथ तिहारे॥

गुणधाम है तू, गुणहीन हैं हम, प्रभु, तू है अंतरयामी।
अनजान हैं हम, पलकी नहिं जानें, तू घट घटका स्वामी।
हाथ पकर प्रभु राह दिखाओ, हम राही पथहारे॥

स्वास स्वास हम भूल करें प्रभु, पल पल गिरते जायें।
इक पग आगे दो पग पीछे—तुम तक कैसे आयें?
गिरतेका प्रभु कौन सहाई? तुम बिन कौन सँभारे?

चरणान बाँधे प्रेमकि डोरी, नामके बल जो बुलाये,
भक्तनके भगवान् कन्हैया, दास बने हरि आये।
ज्ञान ध्यान बुध बल नहिं माँगूँ, माँगूँ दरश तिहारे॥

(१२९)

बड़े भागसे जनम मिला है, देख विफल नहिं जाये!
जीवन है अनमोल रे प्राणी, काहे खेल गँवाये?
वेद पुराण पढ़े बहुतेरे, मनकी आँख न खोली!
प्रेमके सागर, ज्ञान रतन है, दे डुबकी भर झोली।

त्यागी त्याग करे धनसुखका, मनमें शांति न पाये।
आपेसे भरपूर है नैया, तट छूटे—डुब जाये।
रंगमहलमें दुखिया राजा करता सोच विचार।
ज्ञानी ऊँचे ज्ञान सुनावे, मनमें दुःख हज़ार!

पत्थरके मंदिर रे प्राणी, तुलसी तो है पात।
जिन भक्तन भगवान रिझायो—उनकी कैसी जात?
हृदयकि वीणा गीतप्रीतके नामकि तान लगाये।
इक चित हो जिन हरी पुकारा—बंदी हो प्रभु आये!

(१३०)

दूर देशसे आइ बैरागिन, दूर देशसे माई !
देखनको नंदलाल यशोदा, बड़ी दूरसे आई ॥

उछल उछल कर नाच नाच कर नंदित यमुना बोली :
"जनम जनमकी मैल सखी, कल चरनन संग लग धो ली।
हृदय चीर कल अपना मैंने किसीकि राह बनाई।"
अनहोनी यह गाथा सुन मैं दूर देशसे आई ॥

मथुरा देवकी हँस हँस बोली : "सफल जनम है हमारा।
सातबार दे प्राण हृदयके पाया लाल पियारा।"
धन धन जननी युग युग हो गइ धन तु यशोदा माई !
दूर देशसे आई बैरागिन, दूर देशसे आई ॥

जो मुख देखन मीरा आई वह मुख नहिं अनजाना
यह चिरबालक चिरप्रीतम है, इससे प्रेम पुराना।
यह तेरा ना मेरा माई, यह तिरलोक सहाई।
दूर देशसे आइ बैरागिन, दूर देशसे आई ॥

(१३१)

तुम बिन रहो न जाये प्रभुजी, तुम बिन रहो न जाये।
दुख नहिं सूझे, सुख नहिं सूझे, तुम बिन कल नहिं आये

कोइ कहे—तुम अंतरयामी,
कोइ कहे—घट घटके स्वामी,
मैं तो जानूँ—तुम चिरसाथी, जीवन मरण सहाये ॥

योगी तप साधनसे पाये,
ज्ञानी पथ गुण ज्ञान बताये,
मीरा जाने प्रेम भजन प्रभु, गोविंद गोविंद गाये ॥

प्रेमहि पूजा, प्रेमहि शक्ती,
प्रेमहि युक्ती, मुक्ती, भक्ती,
प्रेम विरहमें, प्रेम मिलनमें प्रेमसे प्रीतम पाये ॥

(१३२)

बजाये जा, बजाये जा, तु बाँसरी बजाये जा।
हे ग्वाल बाल नंदलाल! गाये जा, तु गाये जा॥

जो सुनके श्याम, बाँसरी
बनी थि राधा बावरी,
जादूभरी वह मधभरी हरी तु धुन सुनाये जा॥

मैं सुरसे प्राण जोड़ दूँ,
मैं मनका मान तोड़ दूँ,
भली बुरी मै छोड़ दूँ, तु आगसी लगाये जा॥

कमल चरण नुपुर बजा,
अधरपे बाँसरी सजा,
मीराके श्याम आ भि जा, तु चरणसंग लगाये जा॥

(१३३)

कहाँ गयो नंदलाल यशोदा, कहाँ गयो रि कन्हाई?
मैं वैरागिन हरी पुजारिन बड़ी दूरसे आई॥

मैं तो कुछं नहिं माँगू माई,
इक दरशनकी आश हुँ लाई,
धन दौलत सुख मान न माँगू, मैं तो दरश तिसाई॥

ज्ञान ध्यान शकती नहिं माँगू,
सिद्धी ना, मुक्ती नहिं माँगू,
जनम जनमके साथी मेरे मीरा क्यूँ बिसराई?

मोसे प्रभु विन जिया न जाये,
पल भी हरि विन कल नहिं आये,
दुख नहिं भाये, सुख नहिं भाये, बिसरी अपनि पराई॥

माई, नंदके लालसे कहना
सहल है नैनोंसे छुप रहना,
मीराका मन छोड़के जाओ—मानूँ तोहे कन्हाई॥

(१३४)

प्रभुजी, अब मन मानत नाहीं।
दरशन बिन मन धीर न माने, दरशन दो जि कन्हाई!

अब दरशन बिन रहा न जाये,
विरहाका दुख सहा न जाये,
अब तुम बिन प्रभु, कल नहिं आये, बिसरी भली बुराई।

धीरजके बंध टूट गये हैं,
ज्ञान ध्यान सब छूट गये हैं,
नाथ हृदयके रूठ गये हैं—दासी क्यूँ बिसराई?

निर्बल निर्गुण निर्धन मीरा,
द्वार खड़ी गल डालके चीरा,
आन मिलो प्रभु प्रेमके तीरा—तुम बिन और न काई॥

(१३५)

मैं तो शरण पड़ी शरणागत हो,
चरनन संग मोहे लगाओ हरी!
दुखिया नैनाँ पथ देख रहे
इकबार तो दरश दिखाओ हरी!

अंजान न जानुँ मैं रीत पिया,
तुम आन सिखाओ जि प्रीत पिया,
भगतनके सखा तुम मीत पिया,
इकबार तो अपना बनाओ हरी!

पल पल विरहा विष पिया करूँ,
नित प्रेमसे पूजा किया करूँ,
तेरे मिलनकि आशमें जिया करूँ,
मेरे हृदयकि प्यास बुझाओ हरी!

हे भगतवछल गिरधारि सुनो,
हे वृंदावनके मुरारि सुनो,
मीराके हृदयविहारि सुनो,
इस नामकि लाज बचाओ हरी!

(१३६)

सुन सुन रि सखी, कहुँ दिलकि लगी :
मेरे मन भायो रि कन्हाइ सखी,
मैनें श्यामसे प्रीत लगाई !

मैं तो प्रीत लगा दियो जग बिसरा
सब भूली अपनि पराइ सखी,
सब छूटी भली बुराई ॥

ऐसि प्रीत लगी नहिं तोड़ सकूँ,
जग छूटे हरी नहिं छोड़ सकूँ
मन तोड़े पिया, मुख मोड़े पिया,
मैं तो शरणागत हो आइ सखी,
मैं तो तनमन चरनन लाई ॥

मैं तो सेवा करूँ, चरणोंमें रहूँ,
दुखसुखकि हरीसे कछु न कहूँ,
मोहे पास बुला प्रभु दे ठुकरा
मेरा प्रभु बिन कौन सहाइ सखी ?
मैं तो अपना आप गँवाई ॥

नाहिं खेल, कठिन है प्रीत सखी,
बड़े भाग मिले है मीत सखी,
जब हार दिया, सब वार दिया
मीरा हरिदासि कहाइ सखी,
नित गोविंद गोविंद गाई ॥

(१३७)

आवन कह गये, नाथ न आये, साँझकि वेला आये रही।
मंदिरके पट खोल सखी, मैं पथपर नैन लगाये रही॥

फिर आये धेनू मधुवनसे,
लौट चले भौंरे कुंजनसे,
घर घर दीप जले रि सखी, मो विरहा अगन जलाये रही॥

पल पल करते बीत गया दिन,
जीवन ढलता जाये छिन छिन,
सूख न जाये प्रेम डाल यह हृदयका रकत पिलाये रही॥

भकतवछल गिरधारी कहते,
दुख सुख भकतनके संग रहते,
फिर क्यूँ दरशनकी प्यासी यह अँखियाँ नीर बहाये रही॥

शकती मुकती ज्ञान न माँगूँ,
घर धन जीवन मान न माँगूँ,
सब कुछ ले लो, प्रभु दरशन दो—मीरा रो रो बुलाये रही॥

आश लगी है हरि आवनकी,
आश लगी दरशन पावनकी,
इस आशा ही आशामें प्रभु, दासी मीरा गाये रही॥

(१३८)

मोहे इतना ही दे दान हरी—निसदिन मैं तुझे धियाये सकूँ।
तुम पास रहो या दूर रहो—पल पल मैं तुझे बुलाये सकूँ॥

मेरा ना और बिना तेरे,
इक तुम्हीं सहारा हो मेरे,
मैं सारी आश निराशा तज इक तेरी आश लगाये सकूँ॥

तुम्हें तात मात सुत वेलि कहूँ,
तुम विन लाखोंमें अकेलि रहूँ,
मैं तन मन धन अर्पण कर सब इक तोहे ही अपनाये सकूँ॥

सुनो मीराके प्रभु गिरधारी
मैं तो बार बार तुमपे वारी,
मैं जनम जनमकी दासी हूँ, नित तेरी श्याम कहाये सकूँ॥

(१३९)

सखि, कह तो सही : है तू यमुना वही—जिससे प्रीत हरीने लगाई ?
तू ने चीर हया पथ हरीको दिया—आये मथुरासे गोकुल कन्हाई ?

सखि, तेरे हि घाट श्याम रोके थे बाट—राधा नीर भरन जब थी आई ?
तू ने देखे हैं क्या सखी मेरे पिया—तेरे तट पे जो मुरली बजाई ?

यहाँ सखियोंके साथ आये गोकुलके नाथ, तटपे श्यामलने रास रचाई ?
उनसे नैन मिला तेरा भाग खुला अंग अमृतकि धारा बहाई ?

यमुना ! यह कहो—हरि कैसे हैं वह ? श्याम रंग क्या उनसे हि पाई ?
हे रि यमुना वारि ! तो पे मीरा वारि—जिसने देखे हैं मेरे कन्हाई !

(१४०)

मथुराके राही! यह तो कहो : किस हालमें मोहन प्यारे हैं ?
कैसी भाई मथुरा नगरी ? ब्रजवासी काहे विसारे है ?

गोपाल बने राजा है वहाँ, यहाँ हृदय-सिंहासन ख़ालि लगे।
प्रभु विन अब दिन वह दिन न रहे, रूपहली रातें कालि लगें।
राधाकी अँखियाँ भरी भरी व्याकुल नरनारी सारे हैं॥

हमने तो तोड़ सहारे सब इक प्रभुको सहारा बनाया है।
हमने तज अपने पराये सब इक प्रभुसंग प्रेम लगाया है।
पतवार विना ब्रजकी नैया गये छोड़ वह किसके सहारे हैं॥

सूनी गोकुल व्याकुल यमुना—यह हाल न प्रभुसे जा कहना।
इतनी विनती करना राही, प्रभु स्वास स्वास मनमें रहना।
तुम दूर रहो, या पास रहो—हम जनम जनममें तिहारे हैं॥

अनजान हैं हम, कुछ समझे नहीं, हम भली बुराई ना जाने।
इतना बल देना मीराको—नित तेरा किया हि भला माने।
अब तुम तो कहो मथुरावासी—किस हालमें नाथ हमारे हैं ?

(१४१)

गुण मैं कैसे गाऊँ सद्गुरु ? कैसे गुण मैं गाऊँ ?
कैसी आरति करूँ मैं तेरी—क्या चरणों में लाऊँ ?

तुम हो तपस्वी महान् त्यागी, संत, कवी, गुरु प्यारे !
तुम सुखदायक दयाल सद्गुरु, तुम हरिके मतवारे।
जो भी पाया—तुम से पाया, जो देवे सो पाऊँ॥

हरी प्रेम की सुधा है बहती मधुर कंठसे तिहारे।
तू गावे तो झूमे सृष्टी, झुमें चाँद सितारे।
चढ़े है दुर्लभ चरण गुरू के बार बार बलि जाऊँ॥

सत्यदीपके परवाने तुम—अमर पंथ के राही।
कृष्ण नाम के भौंरे सद्गुरु—प्रभुजी के सौदाई।
हरीबोल हरिबोल तु गाये मैं जय जय गुरु गाऊँ॥

(१४२)

सद्गुरु गोविंद एक सखी री, मैं तो इक कर जाना।
दुर्लभ हरिसे मिलना है री अपना सद्गुरु पाना॥

यह बंधन नहिं ज्ञान से होवे, कुलका नहिं यह नाता।
जनम जनम का रिशता है यह जोड़ें आप विधाता।
दुख सुख संग सहाई सद्गुरु, गुरु बिन कौन ठिकाना ?

गुरु मेरे तात मात बंधू हैं, सद्गुरु नाथ हमारे।
सद्गुरु सेवा में पाये री मैं ने साधन सारे।
इन चरणों में सब ही पाया—तप तीरथ असनाना॥

जनम जनम की दासी मीरा शरणागत हो आई।
प्रभु संग टुटी गुरु मिलाये—गुरु रूठे नहिं ठाँई।
कभी न छोड़ें चरण गुरू के—जिन हरिदरशन पाना॥

(१४३)

फागुन आया है रि सखी, फिर फागुनकी ऋतु आई।
कोयलियाकी कूक हृदयमें याद पुरानी लाई।

फागुन आया, पिऊ पिऊ कर गाये पपीहा राग।
जिन घर साजन आज बसे सखि, उनके दुर्लभ भाग।
देखो री सखि, भोर गगनमें आई लिये गुलाल!
किरणोंकी पिचकारीसे रंग धरापे दियो है डाल!
जिन घर साजन बसे सखी री, उन हर ऋतु हि सुहाई।
कोयलियाकी कूक हृदयमें याद पुरानी लाई॥

याद हैं वृंदावनकी गलियाँ, याद है यमुना वारी।
होली खेलत कुंजनबनमें, याद है कृष्ण मुरारी।
रूप अनूप कमलदल नैनाँ गल बैजंती माला।
ग्वाल बाल संग धूम मचाये, याद है मुरलीवाला।
अजहुँ न आये श्याम, सखी री, अजहुँ न आये कन्हाई।
कोयलियाकी कूक हृदयमें याद पुरानी लाई॥

जो घर आवें श्याम सखी, उन्हें प्रेमके रंग भिजाऊँ।
अंग अंग रंग दूँ रंग हरीके, प्रभुकी मैं हो जाऊँ।
तन मन बेच दुँ साजन आगे—दासी हो चरणनकी।
सेवा करूँ रहूँ संग पीके चाकर जनम मरणकी।
मीराके प्रभु गिरधर नागर बिन दरशन तरसाई!
कोयलियाकी कूक हृदयमें याद पुरानी लाई॥

(१४४)

खोल दे मंदिर द्वार पुजारी! खोल दे मंदिर द्वारे।
प्रतिमा जानके पूज रहा जिसे वह हैं नाथ हमारे॥

तू जाने—पत्थरकी मूरत, मैं जानूँ—यह साजन।
बेबस है यह कहे तु कैसे—यह राजनके राजन!
हरिकी गति तू कैसे जाने? लीला है यह न्यारी।
तू जाने—बंदी यह तेरे, यह हैं हृदयविहारी।
बंदी इसके दिवसराज हैं, बंदी चाँद सितारे।
खोल दे मंदिर द्वार पुजारी! खोल दे मंदिर द्वारे।

बल छल छोड़के शरणागत हो—तव तू हरिको जाने।
प्रेमका कजरा दे नैनोंमें—तव ठाकुर पहचाने।
त्यागकि आरति सेवा पूजा प्रेमका दीप जलाओ।
प्रेमसे चुन नैनोंके मोती प्रभुका हार बनाओ।
बालक बन इकबार बुलाना—मिलेंगे प्रीतम प्यारे।
खोल दे मंदिर द्वार पुजारी! खोल दे मंदिर द्वारे॥

कहती मीरा: सुन रे भोले!—आया है, कुछ कर ले।
चुन चुन सीप तो भर ली झोली, कुछ मोती भी धर ले॥
तू परदेशी दूरका बासी इक दिन होगा जाना।
संग न साथी रहेगा कोई इक दिन वह भी आना।
मन मंदिर रख खोल बावरे! जीना हरी सहारे।
खोल दे मंदिर द्वार पुजारी! खोल दे मंदिर द्वारे॥

(१४५)

ऐसे दिन भी थे रि सखी, कभि ऐसे दिन भि हमारे थे।
ना शंका, ना चिंता थी—ना विरहाके अँधियारे थे।

आश भरी हर भोर सखी, संदेश प्रभूका लाती थी।
गोकुलकी हर गली गलीसे हरी नाम धुन आती थी।
एक एक कर नीर भरन पनघट पर सखियाँ जाती थीं।
पनियाँसे भर लाती गगरी, अँखियाँ दरशन पाती थी॥

भरी दुपहर कदंबतले प्रभु धेनु चराने आते थे।
मोर मुकुट सिर, अंग पीतांबर, मुरली मधुर बजाते थे।
रुक जाते थे उड़ते पंछी—ऐसी तान सुनाते थे।
फूल डालसे गिर जाते—चरणनमें हृदय बिछाते थे॥

साँझ भये पूजाके बेले नरनारी मिल गाते थे।
छोटा था ना बड़ा वहाँ—सब प्रेम पुजारि कहाते थे।
शोक नहीं था, ताप नहीं—हरि प्रेमका अमृत पाते थे।
हृदयमें राज गोपालका था, हो नंदित शंख बजाते थे।

चाँदनि रातमें यमुनातीरे मोहन आते थे बनठन !
रूप देख खिल जाती कलियाँ, मतवारा होता मधुवन।
निरख निरख सखियाँ सुख पाती, लिपट लिपट जाती चरणन।
इस वृंदावनमें मीराने वारे प्रभुपे तन मन धन॥

(१४६)

जिन प्रीत लगे हरिसंग सखी, उन दोष पाप छूँ पाये नहीं ।
कहे मीरा—है तीरथ धाम विफल जब हृदयमें नाथ बसाये नहीं ॥
जो हरिकारण कभि रोये नहीं,
अँखियन जल अंतर धोये नहीं,
जो मनका मान हि खोये नहीं वह तो प्रेम गली अभि आये नहीं ॥
जिन संत चरणकी धूल मली,
हरिनाम सुनत मन खिली कली,
जो हरी हरी करें गली गली, उनकी महिमा कहि जाये नहीं ॥
जिन प्रीत लगी हरिसंग सखी,
जिन हृदय रंगा हरिरंग सखी,
हरि सिंधु बनें जो तरंग सखी, उन पल भी श्याम भुलाये नहीं ॥

(१४७)

कैसा मन यह बावरा री सखि, प्रभुसंग प्रीत लगाये !
चरण पियाके नील कमल हैं—भौंरा मन मंडराये ॥
ऐसी प्रीत लगी मोहन संग—कुछ नहिं देखा भाला ।
मैं देखूँ वह जोत जगतकी, लोग कहें—वह काला ।
चाँद समझ मुख मोहनका मन बना चकोरा हाये ।
चरण पियाके नील कमल हैं—भौंरा मन मंडराये ॥
वह तो आहिर जातीका—क्या जाने प्रीत निभाना ?
चोरि करे वह रार करे, वह जाने मुरलि बजाना ।
इस मुरलीसे मोह लिया मन, इससे जग भरमाये ।
चरण पियाके नील कमल हैं—भौंरा मन मंडराये ॥
कहती मीरा : " सुनो सखी री ! प्रीत न करना कोई ।
प्रीत लगा भइ युग युग दासी—प्रेमदिवानी होई ।
जिस तन लागे वह जाने री, कैसे जाने पराये ?
चरण पियाके नील कमल हैं—भौंरा मन मंडराये ॥ "

(१४८)

हरिसंग प्रीत लगा ले मन तू, हरिसंग प्रीत लगा ले।
बुझ नहिं जाये जीवनबाती, प्रेमकि ज्योति जगा ले॥

प्रीत न करना भौंरे सी मन—कलियन पर मंडराये।
सब कुछ लेवे, देन न जाने—कौन उसे अपनाये॥
आश न पूरी पावनसे हो तृष्णा बढ़ती जाये।
प्रीत न करना भौंरे सी मन—अंत समय पछताये॥

प्रीत पतंगे-सी कर मन तू—दीपक पर जो आये।
तन मन वारे आगसे खेले—जीवन दाँव लगाये।
हँस हँस कर वह आपा खो दे, जोतसे जोत मिलाये।
प्रीत पतंगे सी कर मन तू, जो खोवे, सो पाये॥

कहती मीरा: "सुन मन मेरे! जो हरि दरशन चाहे,
बड़ी साँकरी प्रेम डगरिया—संग न कोई जाये।
धन दौलत तज, आन मान तज, ज्ञान ध्यान बिसराये।
शरणागत हों दरशन माँगे—तब हरि दरशन पाये॥

(१४६)

मेरो धन श्याम नाम कांत इक मुरारि ।
मेरी सखि टेक एक मोहन बनवारी ॥

जाके चरण नूपुर, मुरलि अधर, घुँघर घुँघर बाल,
जाके मधुर नैन, मधुर बैन, मधुर मधुर चाल,

जाके चरण नुपूर, मुरलि अधर, कमलदल दो नैन,
जाकि चाल मधुर, मुरलि अधर, मीठे मीठे बैन,
जाको कहे नंदलाल बृंदावनचारी
जाको रंग श्याम कृष्ण अंग पीतधारी,
मेरी सखि टेक एक सो ही बनवारी ॥

जाकि सुनकि मुरलि यमुना उछलि धरा भइ मतवाली,
जाके गोकुल गाम मथुरा धाम कृष्ण नाम आली,
जाको सखि श्याम रंग पीतांबरधारी
मेरी सखि टेक एक सो ही बनवारी ॥

जाके ध्यान धरे गुनि, तप करे मुनि, रंग जाके मीरा राती,
जाके स्वास स्वास हृदयवास—जनम मरण साथी,
जाके सिर मोर मुकुट मीरा दासि तिहारी,
मेरो कांत सो हि श्याम—मीरा तो पे वारी ॥

(१५०)

तू ने काहे बजाई मुरलिया पिया ?
तू ने कैसी यह मुरली बजाई ?
तेरि सुन बाँसरी, मैं भई बावरी,
कैसि मुरलीने सुध बिसराई ?

कुछ कहो तो पिया—काहे छल यह किया ?
कैसे बाँसरीसे है यह मन मोह लिया ?
तेरि जादूकि इस तानने साँवरे,
आग जीवनमें मेरे लगाई ?

हाथ कंगन नहीं, नैना अंजन नहीं,
रहि चुनरी कहीं, पायलिया वहीं,
तूने रागिनि कैसी सुनाई पिया,
तू ने कैसी यह प्रीत जगाई ?

अब छोर नहीं, मुख मोर नहीं,
प्रीत तोर नहीं, मेरो और नहीं,
कहे मीरा : मैं दासी सदा साँवरे,
काहे खेल करनको बुलाई ?

घर काज गये, सुख साज गये,
धन राज गये, सब आज गये,
मैंने ली है हरी, एक तेरी शरण,
मीरा चरणोंमें आई कन्हाई !

(१५१)

अब दरशन दो, प्रभु, दरशन दो, बिन दरशन काहे सताये रहे ?
मैं तो पल पल पंथ निहार रही, दिन आये रहे, दिन जाये रहे !

जो तुम प्रभु, हृदयनिवासी हो,
तुम मनमंदिरके वासी हो,
फिर नैनोंका क्या दोष हरी ? क्यूँ दरशन बिन तरसाये रहे ?

कहते—तुम संग हो दिनराती,
तुम जनम मरणके हो साथी,
फिर जीवन काहे निराश रहे, क्यूँ विरहा अगन जलाये रहे ?

जो तुम प्रभु, अंतरयामी हो,
तुम घट्ट घटके चिर स्वामी हो,
मीराका चीर हृदय देखो : हर रोममें श्याम समाये रहे ।

कहते—तुम जगत रखैया हो,
तुम भवसागरके खिवैया हो,
मैं तो जानूँ—गोपाल हो तुम, कुंजनवन धेनु चराये रहे ।

सिर मोर मुकुट पीतांबर तन,
नित रास रचाओ वृंदावन,
यमुना तीरे मुरली स्वरसे मीराको श्याम बुलाये रहे ॥

(१५२)

सुन सखी री प्रेम गाथा :
पीको कैसे मैंने पाया :
जिसके मुखको योगी तरसें
मेरे घर वह नाथ आया ॥

मेरे अवगुण दोष लाखों
चित धरे ना श्यामने।
जा पड़ी चरणोंमें बोली :
"तेरि हूँ प्रभु, थाम ले।",
तप करे जिसका तपस्वी—
मेरे मन सो ही समाया ॥

ना मैं साधन ध्यान जानूँ,
ज्ञान गुण नहिं कोई री!
मेरा धन गोपाल री सखि!
मेरो धन तो सो हि री।
जिसको खोजें है बैरागी—
मेरे अंतर वह समाया ॥

सो हि साधन, सो हि सेवा,
सो हि पूजा आरती।
शोक भय कैसा सखी री—
वह बने जब सारथी?
"सुन सखी री!"—कहति मीरा—
"जिसने चाहा, उसने पाया ॥"

(१५३)

यह फिर इक दिन हरी तुम विन कहो क्या बीत जायेगा ?
रहेगा मन युँ ही व्याकुल—नहीं यह चैन पायेगा ?

जो मनका मान टूटा ना—हरी ! तुम क्या न आओगे ?
जो माया जाल छूटा ना—दरश क्या ना दिखाओगे !
हृदयकी प्रीत देखो तुम—न देखो दोष प्रभु मेरे।
नहीं अब सुखमें सुख मिलता—न दुख कटता बिना तेरे।
है गिन गिन पल गया दिन ढल बिफल क्या बीत जायेगा ?
रहेगा मन युँ ही व्याकुल—नहीं यह चैन पायेगा ?

जो हूँ अवला—वनो तुम वल, जो पथ हारी—तो पथ देना।
मैं हूँ जैसी भि—तेरी हूँ—शरण अपनी लगा लेना।
लगा कर प्रीत तुमसे नाथ, बोलो मैं कहाँ जाऊँ ?
मुझे कर लो तुम्हीं अपना—तुम्हें कैसे मैं अपनाऊँ ?
इसी आशाहि आशामें यह दिन क्या बीत जायेगा ?
रहेगा मन युँ ही व्याकुल—नहीं यह चैन पायेगा ?

कहे मीरा : "सुनो मोहन ! तुम्हें अब आना ही होगा।
है जिनको इक तेरी आशा—उन्हें अपनाना ही होगा।
तेरे कारण है सब छोड़ा—कहाँ अब छोड़ जाओगे ?
तेरा मुख देख कर जीऊँ—कहाँ मुख मोड़ जाओगे ?
हरी ! इकवार तो आओ—यह दिन भी बीत जायेगा ?
रहेगा मन युँ ही व्याकुल—नहीं यह चैन पायेगा ?

(१५४)

अब कितनी देर है और कन्हाई ? कितनी देर मुरारी ?
दिन आया भी, दिन चला गया—मैं देखूं बाट तिहारी।

कोइ आया धन दरबार लिये,
कोइ सुत सज्जन परिवार लिये,
कोइ आया सुख संसार लिये,
आया राजा और भिखारी॥

आई मैं ख़ाली हाथ हरी!
तज तात मात सुत भ्रात हरी!
मुझ अनाथके तुम नाथ हरी!
तुम्हरे कारण मैं सब हारी॥

मैं भली बुरी तो मानुँ नहीं,
गुण अवगुण भी पहचानुँ नहीं,
तुम बिन प्रभुजी, कुछ जानुँ नहीं,
हूँ शरणागत हे बनवारी!

मैं धन दौलत नहिं चाहुँ हरी!
इक दरशनका वर पाऊँ हरी!
नित गोविंद गोविंद गाऊँ हरी!
प्रभु मीरा तो पे वारी॥

(१५५)

मन रे ! इकदिन वह भी आना :
जिस तन कारण किये झमेले—वह तन भी तज जाना ॥

मन रे ! इकदिन वह भी आना :
जब आयेगी साँझकि बेला, अंत हो जायेगा सब मेला,
रह जायेगा पंथी अकेला,
बंद हो जायेगा जीवन पथ—इनमें खो नहिं जाना ॥

मन रे ! इकदिन वह भी आना :
जिस ममतामें तू है घेरा, जिस कारण कहता—सब मेरा,
जिस छायाने किया अँधेरा,
उठ जायेगा पर्दा पलमें—करके एक बहाना ॥

मन रे ! इकदिन वह भी आना :
जिस ठाकुरसे सब है पाया, सब कुछ पा जिसको बिसराया,
ले ले कर भी तू इतराया,
उस पीसे फिर लेखा होगा—वह दिन भूल न जाना ॥

मन रे ! फिर भी क्यूँ तू डोले ?
मेरे साजन बड़े हि भोले,
पाप पुराय वह कुछ नहिं तोले
इकचित हो इकबार बुला ले—जो तू दरशन पाना ॥

कहती मीरा : "सुन मन मेरे !"
इकदिन वह भी आना :
जिस जगने जगदीश भुलाया—
वह जग होगा बिगाना ॥

(१५६)

यह क्या किया सखी, हरी ने बोल क्या किया ?
नैनों से छिपके श्याम ने घर दिल में कर लिया !

है याद सब-ज़रा ज़रा कहानि री सखी !
यमुनाके तटपे रैन वह सुहानि री सखी !
गई थि भरन जल सखी, मैं यमुना घाटपे।
मिला था साँवरा हरी सखी रि बाटपे।
मैं बावरी सि हो गई सखी रि पा पिया।
यह क्या किया सखी, हरी ने बोल क्या किया ?

मैं भूल राजकाज साज घर सभी गई।
गगरी वहीं रही सखी, चुनरी वहीं रही।
मैं देखती रही वह चंद्रबदन श्यामका :
न याद लोकलाज थी, न कुलका नाम था।
" यही हैं नाथ मीराके "—कहने लगा हिया :
यह क्या किया सखी, हरी ने बोल क्या किया ?

हमसे लगाके प्रीत श्याम अब कहाँ गये ?
न अब रहे हरी हैं वह, न वह हैं दिन रहे।
पर मीरा है वही सखी, है वोहि प्रीत भी :
भली करें, बुरी करें—हैं श्याम मीत भी।
जायें कहाँ जिन्हें प्रभूने अपना कर लिया।
यह क्या किया सखी, हरी ने बोल क्या किया ?

(१५७)

डोल रही है डगमग नैया कहाँ हो खेवनहार
हमारे ! —कहाँ हो खेवनहार ?
तटके बंधन तोड़के आई—आन पड़ी मँझधार ।

छोटीसी जीवनकी नाव :
कैसे सहेगि इतने घाव ?
चारों ओर तुफ़ान उठे हैं—करते वार पे वार
—यह देखो : कहाँ हो खेवनहार ?

कैसी चलीं ये दुखकि हवाएँ ?
घिर आई घनघोर घटाएँ :
पथ अँधियारा, दूर किनारा, सूझे आर न पार
—यह देखो : कहाँ हो खेवनहार ?

लग्गी खिवैया ! छोड़ न देना,
बीच भँवर मुख मोड़ न देना,
ले चलना अब नगरी अपनी—यमुनाके उसपार
—ले चलना नैया, खेवनहार !

कहती मीरा सुनो खिवैया !
जग कहता—तुम जगत-रखैया,
डोल रही फिर क्यूँ यह नैया—लोगे तुम नहिं सार ?
हमारे—कहाँ हो खेवनहार ?

डर क्या जो तुम हो चिरसाथी ?
डर क्या जो जले प्रेमकि बाती ?
तुम राखो या मारो प्रभुजी—देना नहीं बिसार !
बनो चिरसाथी, खेवनहार !

(१५८)

अब चल बस गोविंदकी नगरी—दे छाड़ सकल जंजाल।
चिर सुंदर वृंदावन में—जहाँ हैं करते राज गोपाल॥

है छोटा बड़ा इक तोल वहाँ,
धनि निर्धनका इक मोल वहाँ,
वहाँ वैरि पराया कोइ नहीं—सब करुणामयि के लाल॥

बड़े प्रेममें यमुना बहे वहाँ,
नर नारी नंदित रहें वहाँ,
कलियोंसे खेले मंद पवन—है झूम रही हर डाल॥

हर हृदयमें एक उमंग वहाँ,
सब रंगे हरीके रंग वहाँ,
वहाँ दूइ नहीं और भय भि नहीं—सब नाचें प्रेमके ताल॥

कहती मीरा : "चल सखी वहाँ,
है प्रेमकि मुरली बजति जहाँ,
तेरि जनम जनम की पीर मिटे—दे दरशन प्रभू कृपाल!

सिर मोर मुकुट, पीतांबर तन,
हैं बजते नूपुर छनन छनन,
हरि प्रेम से तोहे बुलाये रहे—गल झूल रही बनमाल॥

(१५९)

अब चल उसपार चलें—गोविंदकि नगरीमें ।
अब तज संसार चलें—गोविंदकि नगरीमें ॥

इस जगसे दूर कहीं,
चिर नंदनवनमें वहीं,
जहाँ शंका ताप नहीं—
गोविंदकि नगरीमें ।
सब शोक बिसार चलें—गोविंदकि नगरीमें ॥

है प्रीत हि प्रीत जहाँ,
न हार, न जीत जहाँ,
रहे मनका मीत जहाँ—
गोविंदकि नगरीमें ।
चल पीके द्वार चलें—गोविंदकि नगरीमें ॥

जहाँ तेरा मेरा नहीं,
जहाँ दुखका बसेरा नहीं,
जहाँ मोह अँधेरा नहीं—
गोविंदकि नगरीमें ।
चल सीखन प्यार चलें—गोविंदकि नगरीमें ॥

सुन मीरा गाये सखी ।
"चल नाथ बुलाये सखी !
वह मुरलि बजाये सखी !
—गोविंदकि नगरीमें ।
चल तन मन वार चलें—गोविंदकि नगरीमें ॥

(१६०)

यह नैया खिवैया ! है तेरे सहारे ।
यह ले चल हे श्यामल ! तु यमुना-किनारे ॥

चले धीरे धीरे यह भँवरोंको चीरे,
इसे संग समीरे ले चल यमुना-तीरे !
है मन—चल वसें आज नगरी तुम्हारी
वह यमुनाके तटपे है गोकुल जो न्यारी ।
यह जीवनकि नैया रखैया हो प्यारे ।
यह ले चल हे श्यामल ! तु यमुना-किनारे ॥

हुँ व्याकुल मैं—कब मान टूटेगा मनका ?
यह कब ध्यान छूटेगा तन मनका धनका ?
शरण तेरि आनेको व्याकुल बड़ी हूँ !
तुम्हारी कहानेको व्याकुल खड़ी हूँ ।
न अब कोइ दूजा—तुम्हीं हो हमारे ।
यह ले चल हे श्यामल ! तू यमुना-किनारे ॥

सुधा प्रीतकी बहति नगरीमें तेरी ।
न हिंसा न शंका, न दुखकी अँधेरी ।
न कर मेरि बेरी तु देरी खिवैया ।
ले चल अपनि बस्ती हृदयके बसैया !
यह कहती है मीरा : “ सुनो श्याम प्यारे !
यह ले चल हे श्यामल ! तु यमुना-किनारे ॥

(१६१)

अब कोइ न रोकनहार सखी री, कोइ न रोकनहार।
अब देश हरीके चली है मीरा छोड़के सब संसार।
पिया घर आज चली ॥

तज तात मात संग सखी सहेली,
पिया मिलनको चली अकेली,
श्याम हि स्वामी, श्याम हि बेली
श्याम हि खेवनहार॥

अब पथके काँटें होंगे साथी,
राह दिखाये प्रेमकि बाती,
हरिकी मीरा हरि रंग राती,
दुख सुख दियो विसार॥

अब दरशन होंगे पीके सखी,
अब भाग खिलेंगे जीके सखी,
चल श्याम कि नगरी री हे सखी,
चल यमुनाके उसपार॥

सिर मोर मुकुट गल माल सखी,
ले अधर मुरलि गोपाल सखी,
सुन गावत है नंदलाल सखी :
" आ जा मीरा इकबार। "

(१६२)

जय जय सुंदर नंदकिशोर।
जय परमेश्वर, जय योगेश्वर
जय मधुसूदन, जय चितचोर॥

जय चितनंदन, जय दुखभंजन,
जय चिरसज्जन, जय सुखधाम।
जय गिरिधारी हृदयबिहारी
कृष्ण मुरारि सुधामय नाम॥

जय नारायण, जय कमलासन,
नित्य निरंजन जय घनश्याम।
जय शिवशंकर उमा-मनोहर
सीतावल्लभ रघुपति राम॥

जय नारायणि, जय तारा जय,
जय माँ दुर्गा, जय काली,
जय भागीरथि जननी गंगा
जय राधा, जय बनमाली॥

देवदेव जय, भकतवछल जय
संतनकी भकतनकी जय।
जय गुरु, जय गुरु, जय गुरु, जय गुरु,
जय हरि हरिचरणनकी जय॥

(१६३)

बड़ी नियारी रीत हरीकी, हरिकी रीत नियारी।
तूफानोंने पाली पोसी प्रेमकि यह फुलवारी॥

छोटीसी यह बेल प्रेमकी करुणाकी है डाल।
उठती देखके दैत्य-घटाएँ पत्ते देते ताल।
लिपट लता जाती डालीसे देख घटा अँधियारी।
बड़ी नियारी रीत हरीकी, हरिकी रीत नियारी॥

बड़ी नियारी रीत हरीकी, हरिकी रीत नियारी।
छोटीसी यह नाव प्रेमकी आश लगावे भारी।

तटके बंधन छोड़ चली करुणाकी ले पतवार।
भँवर खेलायें इसको गोदी, झूला दे मँझधार।
आँधी लोरी दे कर गाये : " पिया-मिलनको जा री ! "
बड़ी नियारी रीत हरीकी, हरिकी रीत नियारी॥

बड़ी नियारी रीत हरीकी, हरिकी रीत नियारी।
छोटासा कायाका पिंजरा, प्राण कोयल मतवारी।

वह तारोंसे प्रीत लगाये उड़े गगनकी ओर।
माटी तो माटी हो जाये—लाख लगावे ज़ोर।
फिर भी इस माटीकी प्रतिमामें नित आये मुरारि।
कहती मीरा : " कोइ न जाने प्रभुजी गती तिहारी॥

(१६४)

जो तू करे—भला वहि प्रभुजी, भला जो तुमको भावे।
धन वह प्राणी, धन वह जीवन, काम जो तेरे आवे॥

जो तू करे—मैं लूँ सिर माथे, जो देवे—मैं पाऊँ।
जो तू कहे—वही मैं बोलूँ, जित बेचे—बिक जाऊँ।
मीरा आई शरण तिहारी, शरणागत हो जावे।
जो तू करे—भला वहि प्रभुजी, भला जो तुमको भावे॥

जनम मरण तो खेल जगतका, दुख सुख आना जाना।
तुमसे बाहर और न कोई, तुम बिन कौन ठिकाना?
युग युगकी दासी प्रभु मीरा, गोविंद गोविंद गावे।
जो तू करे—भला वहि प्रभुजी, भला जो तुमको भावे॥

नाम अपार है तेरा प्रभुजी, धन अनमोल यह नाथ!
घटे न देते, दहे न अगनी, लगे न तस्कर हाथ।
नाम रतन रहे भक्तन झोली, राजन हाथ न आवे।
जो तू करे—भला वहि प्रभुजी, भला जो तुमको भावे॥

ज्ञानी है गुण ज्ञानका प्यासा, सुख माँगे संसार।
मीरा माँगे चाकरि प्रभुजी, शरण दो नंदकुमार!
तन मन दे तेरी हो जावे, चरणन बीच समावे।
जो तू करे—भला वहि प्रभुजी, भला जो तुमको भावे॥

(१६५)

अब ले चल, ले चल, ले चल खेवक, आज नगरिया तेरी।
है पल पल गिनते ढल गया दिन प्रभु, आई रैन अँधेरी—
ले चल आज नगरिया तेरी॥

तू तो खेवक, अमर खिवैया, अमर है यमुना-वारी।
मुझे मिली कुछ दिनकी पूँजी—वह भी मिली उधारी।
डूब न जाये जीवन-नैया, प्रीतम कर नहिं देरी—
ले चल आज नगरिया तेरी॥

मोहे याद है वृंदावनकी, वोही प्रेम-कहानी।
युग युग बीते भूल न पाई मैं वह याद सुहानी।
फिर इकबार तु यमुना-तीरे ले चल नैया मेरी—
ले चल आज नगरिया तेरी॥

याद हैं रूपहली रातें वह सुंदर वृंदावनमें।
सखियन पग बजती थी पायल, नुपुर हरि चरणनमें।
नाच रहे नंदलाल सखा संग, सखियन राधा घेरी—
ले चल आज नगरिया तेरी॥

मुझको याद हैं कदम तले वन ठनकर प्रभुका आना।
मोर मुकुट सिर, अंग पीतांबर, मुरली अधर बजाना।
इस मुरलीसे मोह लिया जग, कर ली मीरा चेरी—
ले चल आज नगरिया तेरी॥

(१६६)

देख सखीरी ! नाचत नंदकुमार !

ठुमुक ठुमुक कर चले साँवरिया

नूपुर दे झंकार !

सखीरी ! नाचत नंदकुमार.

बन ठन चली है राधा साजे,

चंद्रवदन पग पायल बाजे,

छनन छनन बजते हैं कंगन, पड़ती मंद फुहार ॥

पनघट पर कोई अलवेली

हरीमिलनको खड़ी अकेली

रोम रोम हरिनाम बसा है हृदय प्रभूका प्यार ॥

गावत है कोयल मतवाली,

झूम रही है डाली डाली,

नंदित यमुना भी इठलाती, आई मधुर बहार ॥

मोर मुकुट सिर गल बनमाला,

नाचत है सखि मुरलीवाला,

हरख निरख दरशनको आई सज धज ब्रजकी नार ॥

प्रेममें बावरि मीरा गाये :

"सुन रि सखी, सुन नाथ बुलाये" !

चल री चल हरिदरशन पायें यमुनाके उसपार ॥

(१६७)

सद्गुरु! आई शरण तिहारी, बनी भिखारिन गाऊँ।
राखो जी चरणनकी दासी, जो देवे मैं पाऊँ॥

जो तू बोले वही करूँ प्रभु, बैठूँ जहाँ बिठावे।
कहे तो ठाड़ी रहूँ मैं द्वारे—कबहूँ नाथ बुलावे।
दुख सुखकी मैं कहूँ न तुमसे, निसदिन हरी धियाऊँ।
सद्गुरु! आई शरण तिहारी, बनी भिखारिन गाऊँ॥

घर नहिं माँगूँ, धन नहिं माँगूँ माँगूँ ना गुण मान।
हरि चरणनकी भकती माँगूँ, इतना ही दे ज्ञान।
तन मन धन से करूँ मैं सेवा मुकती इसमें पाऊँ।
सद्गुरु! आई शरण तिहारी, बनी भिखारिन गाऊँ॥

सद्गुरु चरण न कबहूँ छोड़ू, प्राण रहे—या जावे।
जनम जनमकी दासी मीरा गुरु गोविंद धियावे।
सब सुख पायो मैं सेवामें—यह तज कहीं न जाऊँ।
सद्गुरु! आई शरण तिहारी, बनी भिखारिन गाऊँ॥

(१६८)

मेरे मन गोपाल बसे री, मन बसयो गोपाल।
इस मुखमें हरीनाम रहे, इस हृदय बसे नंदलाल॥

ना मैं वन वन खोजूँ री सखि, ना मैं जाऊँ मंदिर,
सखी रि, मैं तो साजन पायो इस तन तीरथ अंदर।
जित बैठी मैं हरीकि दासी मेरे हरी दयाल
इस मुखमें हरिनाम रहे, इस हृदय बसे नंदलाल॥

ना बैरागी भेष बनायो, तप साधन ना कोई।
ज्यूँ राखे मैं रहूँ सखी री, शरणागत मैं होई।
अंतर प्रेमका दीप जलायो, आये हरी दयाल।
इस मुखमें हरिनाम रहे, इस हृदय बसे नंदलाल॥

सुन रि सखी तोहे आज कहूँ मैं हरीमिलनकी बात।
मेरा था सो हुआ हरीका, हो गये मेरे नाथ।
मीरा गोविंद गोविंद गाये, नाचे प्रेमके ताल।
इस मुखमें हरिनाम रहे, इस हृदय बसे नंदलाल॥

(१६९)

मेरे हृदय बसे नंदलाल सखी,
मेरे हृदय गोपाल समाये रहे।
नहिं अँखियों ने देखा पीको
फिर भी वह मनमें आये रहे॥

बड़ि दूर समझ रहें नैन भरे,
बड़ि पास समझ मन ध्यान धरे,
नहिं कान सुनें नूपुर प्रभुके
पर प्राण हैं ताल मिलाये रहे॥

लगि प्रीत सखी, नहिं तोड़ सकूँ,
सब छूटे, हरी नहिं छोड़ सकूँ,
प्रभु बालक हैं, मोहे बालु समझ
वह बनाये रहे, वह मिटाये रहे॥

नहिं ध्यान मान धन माल सखी,
मेरे इक हैं गिरधरलाल सखी,
कहे मीरा : कठिन यह प्रीत बड़ी,
वोहि पाये जो आपा गँवाये रहें।

(१७०)

हे गोविंद, हे गोपाल, कृष्ण, हे मुरारि!
हे दयाल, नंदलाल, पापतापहारी!

तोसो भगतवछल नहीं, नाथ कौन तो सो,
मोसो पतित और नहीं, ना अनाथ मो सो।
तोहि आइ शरण तेरि हे हृदयविहारी!

कमल नैन, मधुर बैन, माल गल सुहावे,
चपल चरण प्राणहरण यमुनातट आवे।
मधुर मधुर मुरलि अधर अंग पीतधारी!

है कृपाल नाम तेरो सुनके मीरा आई।
मेरि बेर इतनी देर श्याम, क्यूँ लगाई?
जनम जनम बाट देखुँ नाथ मैं तिहारी!

(१७१)

इकबार जो दरशन पाऊँ सखी, इकबार जो दरशन पाऊँ,
मैं जनम जनमके, दुख बिसरा हरि चरणन संग लग जाऊँ !

मैं जानूँ वह जलमें थलमें, वह अवनीमें, आकाशमें वह ।
मैं जानूँ वह घट घट बासी, है हृदयकि हर इक आशमें वह
पर व्याकुल मन नहिं माने री, क्या बोल इसे समझाऊँ !

मन माँगे नंदका लाल सखी, जो नयनमनोहर कहलावे,
सिर मोर मुकुट, गल वनमाला, जो अधर मुरलिया ले आवे,
जिस तन पीतांबर सोहे री, मैं वोही नाथ धियाऊँ !

मैं जानूँ वह तिरलोकपती, रहें चंदा तारे चरणनमें,
मन तो माँगे गोपाल वही—जो धेनु चरावे मधुबनमें,
जिसके चरणन नूपुर बाजे, उस गोविंदके गुण गाऊँ !

इकवार जो दरशन पाऊँ सखी, इकबार जो देखूँ वनवारी,
मैं हियेसे चरण लगा बैठूँ, जिन चरणन पर मैं बलिहारी ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, मैं दासी उसकि कहाउँ !

(१७२)

सखी वह पास आता है, सखी वह पास आता है ।
नहीं संग कोइ जब होता—तो वह संगी हो जाता है ॥

अकेली जब मैं होती हूँ, अकेली तो नहीं होती,
नयनमें आ झलकता है वह बन कर नयनके मोती,
हृदयके सूने मंदिरमें वह दीपक आ जलाता है ॥

निराशा की बदरिया घेर लेती प्राण जब मेरे,
वह बनकर चाँद करुणाका मिटा देता है अंधेरे,
अमर धुन वह हृदयवीणाके तारों पे बजाता है ॥

वह निसदिन संग है मेरे, मरण जीवन वह साथी है,
तभी युग युग सखी मीरा हरीके गीत गाती है,
वह बनकर प्रेम आता है, वह प्रीतम मन लुभाता है ॥

(१७३)

सखी फिर याद आती है, किसीकी याद आती है !
हृदयकी सूखि बगियामें घटा करुणाकि लाती है।

वह वृंदावनमें बीते दिन सखी फिर लौट आते हैं,
वही गोकुलमें कुंजनवन रसीले पंछि गाते हैं,
यह कैसी याद आती है, बिसर सब सृष्टि जाती है !

सलोनी सी वही यमुना, सुहानी सी वही रातें,
वही पनघटपे सखियोंमें हैं होती श्यामकी बातें,
सखी यह कैसि चिंगारी है—दुख भय सब जलाती है !

मची है धूम होलीकी यशोदा माइ के अंगना,
वही झंकार नूपुर की, हैं रुन झुन बज रहे कंगना !
यह वृंदावन कि लीला है—जो बनकर याद छाती है।

बजाता बाँसरी देखो सखी, फिर कौन आता है !
गले बनमाल झूले है, चरण नूपुर बजाता हैं !
यह है गोपाल मीराका—सुनो मीरा यह गाती है !

(१७४)

श्यामने मुरली बजाई !
तान कैसी यह सुनाई !

बाँसरीकी सुनके धुन गुनगुन भई कुंजनमें है।
ताल पर गोपालकी हर डाल झूमे बनमें है।
तान कैसी यह सुनाई !
श्यामने मुरली बजाई !

हर लिया है तानने तन प्राणभी मन ज्ञान भी।
ना रहा अब ध्यान जगका छूटि आन भि, मान भी।
लगन कैसी है लगाई !
श्यामने मुरली बजाई !

राम है, अभिराम है तू श्याम है गुणधाम है।
लाल है, गोपाल है, किरपाल तेरो नाम है।
शरण मीरा तेरि आई !
श्यामने मुरली बजाई !

(१७५)

मन रे! अवसर बीतो जाये!
किस मायामें पड़ा है भोले! हरीनाम बिसराये!

एक सुहाने सपने जैसे
बीत चले दिन रात हैं ऐसे,
लाख रतन दे मोल मिले ना—जो पल दियो गँवाये!
पल पल नाम सिमर रे प्राणी!—जीवन विफल न जाये!

जिस धन पीछे किये झमेले,
काम न आये अंतके बेले,
यह तन यह धन काम न आये—जिनको अपना बनाये।
पलकी तो तू जाने नाहीं—दूरकि आश लगाये!

कहती मीरा: " सुन मन मेरे!
काम न पूरे होंगे तेरे,
ख़ाली आया, ख़ाली जाना—वहीं जहाँ से आये।
कौन कहे—कब जाना होगा, वहीं जहाँ से आये!

मन! अपने में लगन लगा ले,
हरी नामका दीप जला ले,
इसमें यहाँ भि कटे अँधेरा, आगे पथ दिखलाये।
मन जीते सो सब जीते, जो प्रभु पाये—सब पाये॥

(१७६)

जा साँवरेसे कह दे—वह आये या न आये।
हम जायेंगे न पनघट—वह जाये या न जाये॥
मुरली बजाई काहे?
सुध बुध भुलाई काहे?
अब ना सुनेंगे मुरली—बजाये न बजाये॥
अपना हमें बना कर
रहता है दूर जा कर,
अब हम न पास होंगे—मनाये न मनाये॥
मीरा तु इतना कहना:
"कैसे हो दूर रहना?
विरहामें पा हि लेंगे—वह आये या न आये॥"

(१७७)

इकदिन तुम आओगे प्रभुजी, इकदिन तुम्हें आना ही होगा।
तुम रह न सकोगे दूर हरी, तुम्हें दरश दिखाना ही होगा॥

मैं जानूँ लाखों दोष पापसे अंग अंग भारी हरि, मेरा।
पर तुम तो करुणासागर हो, है पतित-उधारन नाम तेरा।
तुम दीनदयाल कहाते हो, यह नाम बचाना ही होगा॥

मैं मानिक मोती माँगूँ नहिं, ना चाहूँ सुखसंसार हरी!
तुमको माँगूँ, तुमको चाहूँ, तुमको देखूँ इकबार हरी!
जिस प्रेमसे प्रभु, तुम आ जाओ—वह प्रेम लगाना ही होगा॥

मैं तप साधन नहिं जानुँ पिया, मैं निर्गुण, ज्ञान न ध्यान, हरी!
मैं तो इक नाम तेरा जानूँ, इक तुम पर ही है मान हरी!
यह मान न तोड़ सकोगे तुम मोंहे अपनाना ही होगा॥

मैं क्या जानूँ—तुम क्या हो हरी? इतना जानूँ—मैं तेरी हूँ।
तुम जनम जनमके स्वामी हो, मैं जनम जनमकी चेरी हूँ।
तुम वृंदावनके साथी हो, यह साथ निभाना ही होगा॥

सुनती हूँ—तुम परमेश्वर हो, नारायण, जगतरखैया हो।
मैं तो देखूँ गोपाल हो तुम, मनमोहन हृदयबसैया हो।
मीराने ठान लि देखनकी, प्रभु तुमको पाना ही होगा।
प्रभु, आओ, आना ही होगा॥

(१७८)

मैं गोविंद गोविंद गोविंद गाऊँ।
हरी बोल हरी बोलकी धुन लगाऊँ॥

जगतसे बड़ी दूर गंगाकिनारे
जहाँ चूमते हों तुहिनको सितारे
मैं छोटासा इक तेरा मंदिर बनाकर
मैं फूलोंसे कलियोंसे उसको सजा कर
मैं गोविंद, गोविंद, गोविंद, गाऊँ,
"हरी बोल हरी बोल" की धुन लगाऊँ॥

न कोई हो अपना, न कोई पराया,
(न बंधू, न बैरी, न स्वामी, न जाया)
हरी नाम मुखमें, हरी नाम साथी,
हरीकी मैं जोगन, हरी रंग राती,
मैं गोविंद, गोविंद, गोविंद, गाऊँ,
"हरी बोल हरी बोल"की धुन लगाऊँ॥

हो पर्वतके आँगनमें हरियालि शय्या,
पवन गावे लोरी, हो तारोंकि छैया,
मैं सो जाऊँ प्रभु; नाम तेरा धियाते,
हो परभात "गोपाल, गोविंद" गाते:
मैं गोविंद, गोविंद, गोविंद, गाऊँ,
"हरी बोल हरी बोल"की धुन लगाऊँ॥

लगन तेरे चरणोंसे ऐसी लगाऊँ,
जिधर श्याम, देखूँ तुम्हें नाथ पाऊँ।
तुम्हें मेरि प्रीती, हरी, बाँध लाये
ओ मीराके गोपाल, तू रह न पाये—
जो इकबार "गोविंद, गोविंद," गाऊँ,
"हरी बोल हरी बोल"की धुन लगाऊँ॥

(१७६)

कभि ऐसे दिन भी थे रि सखी, अब ऐसे दिन भी आये हैं :
तब सुखकि घटायें झूलति थीं, अब दुखके बादल छाये हैं ॥

था धरणीपर इक स्वर्ग बना इस सूने वृंदावनमें कभी,
थी ऋतु वसंत नित मुस्काती इस खोयेसे मधुवनमें कभी,
थी करुणाकी बरखा होती, यह प्रेममें यमुना बहती थी,
ना आजका शोक, न कलका भय, सब सृष्टी नंदित रहती थी,
अब दुखिया है संसार सभी, सब मायाने भरमाये हैं ॥

है याद सखी वह भोर भये पनघट पर नीर भरन जाना,
मन हरी मिलनकी आशा ले गगरीसे कंगन टकराना,
सुन पायलकी रुन झुन रुन झुन हरि आँगनमें थे आ जाते,
मन प्रेमसे भर देते थे पिया, नैनां थे प्रभु दरशन पाते,
कभि हर इक भोर थि आश भरी, अब विफल यह जीवन जाये है॥

अब कहाँ गये वह दिन रि सखी, वह हरख कहाँ, वह प्रीत कहाँ ?
अब "मैं-मेरी"का जाल बिछा, वह प्रीतकरनकी रीत कहाँ ?
है गोकुल वह यमुना भी वह, है श्याम वही, मधुवन भि वही,
अब हम ही वह न रहे रि सखी, वह हृदय नहीं, वह मन भि नहीं"
अब चिंतासागरके तटपर बालूके महल बनाये हैं ॥

सुन सुन रि सखी, सुन बाँसुरिया, फिर बजती आज कदंबतले,
फिर आज बुलावे साँवरिया, सिर मोर मुकुट, है माल गले,
चल चल री मीरा वृंदावन, हम फिर हरि दरशन पावें सखी !
चल सीखन प्रीतकि रीत चलें—फिर प्रेमनगरिया बसावें सखी !
फिर मीरा आई प्रेमकरन, फिर "गोविंद गोविंद" गाये है ॥

(१८०)

आज सखी मैं साजन पायो, पायो मैं गिरिधारी !
योगी ऋषि जिस सुखको तरसें पायो वह बनवारी !

सखी रि, प्रेमके मोल लियो है,
हृदय तराज़ु तोल लियो है,
ऐसी डोरसे बाँध लियो मैं—जावे कहाँ मुरारि !

पुण्य न जानूँ, पाप न जानूँ,
भली बुरी मैं कुछ नहिं मानूँ,
मन मंदिर मैं खोल दियो री, आयो हृदयविहारी ॥

कोइ कहे : " वह जगतरखैया,
भवसागरका है वह खिवैया,
मैं जानूँ—वह परम मनोहर, अंग पीतांबरधारी ॥

मोर मुकुट गलमाल सुहावे,
वृंदावनमें श्याम कहावे,
जिसके चरणन नूपुर बाजे, अधर मुरलिया प्यारी ॥

जिस साजन सा और न कोई,
मेरो तो गोपाल वह सोई,
जनम जनमकी दासी मीरा मनमोहन पे वारी ॥

(१८१)

तुम आ जाना प्रभु, आ जाना ।
जब साँझकि बेला आये हरी, सूने मन दीप जला जाना ॥

है इकही आशा प्रभु मनमें—तुमको पाऊँ, तुमको पाऊँ ।
जग के इन झूठे दीपकसे अब प्रभु कबतक दिल बहलाऊँ ?
इस शोर झमेलेमें मैं हरी, पथ तेरा भूल नहीं जाऊँ ।
मैं लाखों गीत हुँ गाये चुकी, अब नाम तेरा प्रभुजी गाऊँ ।
जिस मुरलीसे मन मोह लिया, वह मुरली श्याम बजा जाना ॥
तुम आ जाना प्रभु, आ जाना ॥

अब मान नहीं, अपमान नहीं, बुध बलका अँधेरा नहीं रहा,
अब बैरि नहीं है, मीत नहीं, प्रभु तेरा मेरा नहीं रहा,
अब शोककि रजनी बीत गई, अब सुखका सवेरा नहीं रहा,
अब मुकतीकी ना आश रही, जग रैनबसेरा नहीं रहा ।
अब तूही तू हो जित देखूँ—प्रभु येही रीत सिखा जाना ॥
तुम आ जाना प्रभु, आ जाना ॥

मीराके प्रभु गिरिधर नागर ! मैं जानुँ पिया तुम आओगे ।
यह जीवन विफल न जायेगा, तुम जीवन सफल बनाओगे ।
मैं ठाड़ि रहूँगी जनम जनम, इकबार तो दरश दिखाओगे ।
जिसका तुम बिन प्रभु कोइ नहीं, हे दयाल उसे अपनाओगे ।
हरि, नाम तुम्हारा भकतबछल, इस नामकि लाज बचा जाना ॥
तुम आ जाना प्रभु, आ जाना ॥

(१८२)

मैं देखती रही सखी मैं देखती रही।
मैं देखती रही॥

मधुबनमें एकदिन गई सखी, मैं दिन ढले,
वनठनके देखा साँवरा आता कदमतले।
था पीतवसन प्राणहरण श्याम रंग था,
अनूप था वह रुप मधुर अंग अंग था।
मनमोहनी छवी सखी, मैं देख थम गई।
मैं देखती रही॥

ले ली अधरपे फिर मधुर सि बाँसरी पिया,
मुरली कि तानसे यह प्राण पी ने मोह लिया,
यह बाँसरी कि तान सुन मैं बावरी भई।
मैं देखती रही॥

नूपुरकि ताल दे गोपाल घूम रहे थे।
डाली पे झूल झूल फूल झूम रहे थे।
नंदित थे कुंजवन सभी, न शोक था कहीं!
मैं देखती रही॥

अर्पण हिया सखी किया हरीके चरणोंमें।
मीरा बनी सखी धनी यह तन भि मन भि दे।
दासी जनम जनमकि मैं सखी रि हो गई।
दासी जनम जनमकि लीला साथि हो गई॥

(१८३)

प्रभु घर आयेंगे रि सखी अब मनमोहन घर आयेंगे।
जनम जनमके दुःख हमारे दरशन पा कट जायेंगे।

देख वसंत है छाई वनमें,
डाल डाल झूमें कुंजनमें,
कोकिल, मोर, पपीहा बोले, भोले पंछी गायेंगे।

झिल-मिल करते कहते तारे:
"अब आयेंगे नाथ हमारे!"
मधुर पवन संदेश है लाई: "प्रभु वसंत वन छायेंगे।"

जनम जनमके दुःख हमारे दरशन पा कट जायेंगे।
देख गगनमें भोर भई है
बिरहन रजनी बीत गई है,
मन मंदिरमें हुआ उजाला प्रेमके शंख बजायेंगे॥

कहती मीरा: "सुन रि सखी सुन
मधुर मधुर बाँसुरियाकी धुन!
रह न सकेंगे दूर हरी—हम ऐसी प्रीत लगायेंगे।"

टूट गये हैं बंधन सारे,
खोल दिये हैं मंदिर द्वारे,
तन मन धन अर्पण कर अब हम शरणागत हो जायेंगे।
जनम जनमके दुःख हमारे दरशन पा कट जायेंगे॥

(१८४)

सावनकि घटा यह तो बता आइ कहाँ से,
तू आइ कहाँ से
हैं श्याम कहीं ? देखे वहीं—आइ जहाँ से
तू आइ जहाँ से !

क्यूँ मस्त भई झूम रही, बोल तो आली ?
है किसकि लगनमें तु मगन, ओ मतवाली !
आँचल यह तेरा नीर भरा लाइ कहाँ से,
तू लाइ कहाँ से ?

यमुनाके कहीं पार वहीं पीकि नगरिया,
मजबूर हुँ, मैं दूर हुँ, अनजान डगरिया,
विरहिन पे भला बरसेगि क्या—छाइ कहाँ से,
तू छाइ कहाँ से ?

सावनकि घटा जा तु ज़रा देश पियाके,
कह दे ना कथा प्रेमविथा हाल हियाके,
मीरापे घटा बिरहकि आ धाइ कहाँ से,
तू धाइ कहाँ से ?

है श्यामल रंग कोमल अंग कुंजविहारी !
है माल गले, क़दमतले नाचे मुरारि !
सुन री सखि सुन मुरलिकि धुन आइ कहाँ से,
फिर आइ कहाँ से ?

(१८५)

मीरा :

कैसी लगन लगाई तूने, कैसी लगन लगाई !
तेरे प्रेमकि दासी हो कर राजकाज तज आई ।
मुरली कैसि बजाइ पिया !
तन मन मेरो मोह लिया
अब तुम बिन ना माने हिया, दरशन दो जि कन्हाई ।
तेरे प्रेमकि दासी हो कर राज काज तज आई ॥

गोपाल :

कैसी प्रीत लगाई तू ने कैसी प्रीत लगाई !
तेरी प्रीतहि बाँधके मोहे बेबस करके लाई ।
तूने " गोविंद, गोविंद " गाया,
" श्याम, श्याम " जो मुझे बुलाया,
मीरा मैं भी रह नहिं पाया, आया देख कन्हाई !
तेरी प्रीतहि बांधके मोहे बेबस करके लाई ॥

मीरा :

कैसी लगन लगाई तूने, कैसी लगन लगाई !
लोक लाज, भय, कुलमर्यादा, प्रभु मैं सब बिसराई ।
प्रेममें नीर भरा नैननमें,
प्रेममें आई प्रभु दरशन दे !
प्रेममें गाऊँ, तन मन धन ले अर्पण करने लाई ।
लोकलाज, भय, कुलमर्यादा—प्रभु, मैं सब बिसराई ॥

गोपाल :

केसी प्रीत लगाई – तूने कैसी प्रीत लगाई !
शंख चक्र कर गदा पद्म तज, मुरली हाथ उठाई ।
प्रेममें " ब्रजका लाल " कहाऊँ,
प्रेममें " नंददुलाल " कहाऊँ,
' मीराका गोपाल ' कहाऊँ, भकतबछल सुखदायी ।
' मीराका गोपाल ' कहाऊँ, भकतपछन सौदाई ॥

(१८६)

पतित उधारिनी गंगे
हरे भरे तट अंक ले नाचे चंचल तेरि उमंगें।

कितही नगरी तीरथ हो गइ चरण चूम माँ तेरे!
कित नरनारी धन्य सुधासे करती साँझ सवेरे!
भारतवर्षके युगयुगसे तू कंठमें है जलमाला।
प्यासी धरतीकी हरियाली शीतल पुण्यतरंगें!

नारद-कीर्तनसे हो नंदित हरिकरुणा बह आई।
ब्रह्मकमंडल झल नहिं पाया धूर्जटि जटा बढाई।
ढली ज्योतकी अंबरसे सौ धारा कजरी राती।
चरण हिमाचलसे जल बन फिर मिली तु सागरसंगे।

क्लांत जगतके दुखसुखसे हो अंत खेल जो मेरा,
नैनन निंदिया बरसाना हो, कानमें कल-कल तेरा।
बरसे शंकित प्राणमें शांती, बरसे अमृत अंगे।
माँ भागीरथि! जाह्नवि! सुरधुनि! कलकल्लोलिनि गंगे!

[—बँगला मूल - द्विजेंद्रलाल]

पतितोद्धारिणि गंगे।
श्याम विटपिघन-तट-विप्लाविनि धूसर-तरंगभंगे!

परिहरि 'भवसुखदुःख यखन मा शायित अंतिम शयने,
वरिष श्रवणे तव जलकलरव, वरिव सुप्ति मम नयने!
वरिष शांति मम शंकित प्राणे, वरिष अमृत मम अंगे,
मा भागीरथि! जाह्नवि! सुरधुनि! कलकल्लोलिनि गंगे॥

(१८७)

भारतवर्ष।

नेत्र मिले यहाँ महाज्योतिसे मानवके घन भारत जननी!
एशियाकी तुम तीरथभूमी, जगततारिणी, माँ दुखहरणी!
मानवताको दी है तुमने उपनिषदोंकी दरशनदीक्षा।
तुमसे ज्ञान लिया सृष्टीने धर्म शिल्प भकतीकी शिक्षा।
अपराजेया भारतमाता! कौन कहे— तुम किरपापात्री?
कर्म ज्ञानकी तुम हो जननी, धर्म ध्यानकी तुम हो धात्री॥

आप बने भगवान् सखा, भगवद्गीताका राग सुनाया।
अंग लगा कर धूली चैतन हरीप्रेममें नाचा गाया।
राजपुत्र सन्यासीने दैवी करुणाका दीप जलाया।
तरुण तपस्वी शंकरने "सोऽहं" मंतरका तूर्य बजाया।
अपराजेया भारतमाता! कौन कहे— तुम किरपापात्री?
कर्म ज्ञानकी तुम हो जननी, धर्म ध्यानकी तुम हो धात्री॥

भारतवर्ष! नहीं क्या वह तुम अंक आर्य ऋषि जिसकी जाये?
दिव्यदृष्टिके सिंधूसे जो मोती वेदोंके चुन लाये?
हमीं नहीं क्या अंश उन्होंके, गर्व न हो क्यूँ उनपर माता?
अनूप महिमा उस जातीकी, धन है उसकी अतीत गाथा।
अपराजेया भारतमाता! कौन कहे—तुम किरपापात्री?
कर्म ज्ञानकी तुम हो जननी, धर्म ध्यानकी तुम हो धात्री॥

गहरि वेदना तेरी माता, घोर घटा भी तुमपर छाई।
शोक करें क्यूँ लाल तुम्हारे घटमें शकती तुमसे पाई।
नैनन आगे भविष्य चमके, झलके तेरा अतुलादर्श।
नवयुगमें फिर दीप बनेगा प्रेम तुम्हारा भारतवर्ष!
अपराजेया भारतमाता! कौन कहे—तुम किरपापात्री?
कर्म ज्ञानकी तुम हो जननी, धर्म ध्यानकी तुम हो धात्री॥

(१८८)

भारतमाता

सुनील सागरकी रानी बन कमल खिली जब भारतमाता,
प्रेमानंदकि उठी तरंगें फिर मुस्काया जीवनदाता।
लुप्त अँधेरे हो गये पलमें अनादि ज्योती देख तुम्हारी।
"अनंत शकती जगततारिणी! जय जय जननी!"–अवनि पुकारी!

सागर दामन चूम रहे हैं, झरनेसी लहरें वालोंमें।
भाल है सुंदर, फूल सि रंगत, कली सि मुसकान है गालोंमें।
आँगन सूरज चंदा नाचें, तारे खेलें आँखमिचौली।
पायलकी झंकार है तूफान, ऊर्मि पाँवसे खेले होली।

भँवर चरणमें रास रचाये, ताज तुहिनका सिर पर साजे!
मोतीकी मालासी तटिनी हार बनी माँ, गले विराजे!
सूनी मरुभूमीमें वालू जलती तपती दमक रही है।
हरे भरे नंदनमें चंचल पवन हँसी बन चमक रही है।

अनथक आँधी पंख लगाये मान भरे किस बलसे झूमे।
राग वही कोयल सा गाये शरण पड़ी—जब चरण माँ चूमे।
दामिनि वीणा, तार हैं बरखा, धूम धामसे बादल गाये।
अतुल सुगंधित बगिया महके, चहके बुलबुल हिये लुभाये।

हृदयमें तेरे शांति विराजे, कंठमें झलके अभया शकती।
अन्नदाता लाखोंकी माता—चरनन रहती मुकती भकती।
नंदित तू संतानके सुखमें, जग दुखिया, तो तू दुखियारी।
भारतमाता! लोकतारिणी! जगकी जननी! जय हो तुम्हारी!

चरणकमलसे तेरे माता, धन धन धरणी हो गइ सारी।
"जय जय जननी, जगत कि शोभा, लोक कि रानी!"–अवनि पुकारी!

(१८६)

जन्मभूमि

पुष्प रतनसे जड़ी, सुवर्ण खेतसे मढ़ी,
निखिल रंगमें रंगी यह धरणीका सिंगार है।
चरण सपनोंकी लड़ी गलेमें धनुक हार है॥

सूर्य चंद्र तेजवान्, हैं दीप बन सजे महान्,
मेघ दामिनोके संग कलोल नीलसे करे।
सुना रहे हैं लोरियाँ यह भोले पंछि मदभरे॥

युँ पवन खेले खेत संग, हो सागरोंमें ज्यूँ तरंग,
पर्वतोंके दामनों में तटिनियोंका खेल है।
वह झूम कर तले हुआ यह गगन अवनि मेल है॥

वनोंमें फूल खिल रहे, हैं बुलबुलोंके चह चहे,
गुलाबके निखार पर मदहोश भौंरे आ गये।
वह अधर चूम रूपका, यह प्रेमरस हैं पा गये॥

दिलोंमें माँके प्रेम यूँ, सुधाबरस रही हो ज्यूँ
चरण चूम तेरे माँ, हृदयसे लगाया हूँ।
यहीं मरूँ, जनम जनम जहाँ, मैं विरल भाग पाया हूँ॥

जगतभरकी यह है रानी, रूप गुणमें मनोरमा।
अवनि पर ना देश ऐसा जनमभूमि तिलोत्तमा।

(१६०)

भारतके रखवाले

हम भारतके हैं रखवाले, देशका बल हम, प्राण हैं हम।
इज़्ज़त इसकी शान हमारी, माँ है यह, संतान हैं हम।

ऊँचा रहे निशान हमारा,
सतका रहबर, सुबहका तारा!
सर यह झुके ना, पाँव रुके ना,
आँधी बनकर छायें हम।
बढ़े चलेंगे, बढ़े चलेंगे,
मौतसे भी लड़ जायें हम॥

तूफानोंके संग पले हैं, आगसे होली खेली है।
सूरज शकती, धनुक दामिनी—इन हाथोंमें लेली है

ऊँचा रहे निशान हमारा,
सतका रहबर, सुबहका तारा!
सर यह झुके ना, पाँव रुके ना
आँधी बनकर छाये हम।
बढ़े चलेंगे, बढ़े चलेंगे,
मौतसे भी लड़ जायें हम॥

मुशकिल हों, आसाँ हों राहे—मनाज़िल तक हम जायेंगे।
देशकि ख़ातिर लाल वतनके नीलसे तारे लायेंगे।

ऊँचा रहे निशान हमारा,
सतका रहबर, सुबहका तारा,
सर यह झुके ना, पाँव रुके ना
आँधी बनकर छायें हम।
बढ़े चलेंगे, बढ़े चलेंगे,
मौतसे भी लड़ जायें हम॥

(१६१)

जय हो

भारत देशकि बीती रजनी, भोरके शंख हैं बाज रहे।
घर घरमें हुआ उजाला
सब सुखकी बाँधे माला,
आशाने अमृत ढाला, जी खिल कर नाच रहे।

आकाशमें चमके सूर्य,
सुन विजयका बजता तूर्य,
नरनारी साज रहे।
हर दिलमें हुआ सवेरा,
हरि प्रेमसे मिटा अँधेरा,
चल आगे ... चल आते ...
नव रीतसे जाती जागे ...
अब प्रीतका राज रहे॥

मिथ्या शंका अधर्म तजके हृदयने सत्य रतन पाये।
हरिवंदन लय मनभानी,
सुन अंतर झलके प्राणी,
युग ऋषिने सुनाई वाणी, "है अमर डरे काहे!"

जाने नवयुग आयेगा,
माँका मंतर पायेगा,
फिर विजयगीत गायें।
हर दिलमें हुआ सवेरा,
हरि प्रेमसे मिटा अँधेरा,
चल आगे ... चल आगे ...
नव रीतसे जाती जागे ...
अब प्रीतका राज रहे॥

(१६२)

जय हिंद

जीवन है पाया जिस लिये हम करके वह दिखलायेंगे।
कठिनाइयोंपे झूलते भारतके गुण हम गायेंगे।
प्रेमी हि क्या प्रीतम तो चाहे, प्रेम कर पाये नहीं ?
वह तीर क्या निकले जो करसे लक्ष्यतक जाये नहीं ?

खेलेंगे होली आगसे, तूफान बन हम छायेंगे।
जीयेंगे माँ, तेरे लिये—तेरे लिये मिट जायेंगे॥

निर्बल नहीं, बलवान हैं, हम हिंदकी संतान हैं।
इस देशकी हम आन हैं, हम मान हैं, हम शान हैं॥
लाओगि लौ जिस पथपे माँ—आँखें बिछायेंगे वहाँ।
आवाज ऊँची सत कि हो, झूमेगा सुन सारा जहाँ।

खेलेंगे होली आगसे, तूफान बन हम छायेंगे।
जीयेंगे माँ, तेरे लिये—तेरे लिए मिट जायेंगे॥

परवाने हम, हिंद दीप है जलना हमारा काम है।
आँखें लगी मनज़िलपे हैं—माँ, दिलमें तेरा नाम है।
मुशकिल जो आगे आयेगी—ठुकराके बढ़ते जायेंगे।
होनीके भी बंदी नहीं—तकदीरसे टकरायेंगे।

खेलेंगे होली आगसे, तूफान बन हम छायेंगे।
जीयेंगे माँ तेरे लिये—तेरे लिये मिट जायेंगे॥

••••••••••••••••••••••••

INDIRA DEVI

TRANSLATIONS

By D. K. R.

SUDHANJALI

Poems by Indira Devi (pp. 194–202)

These poems were composed by Indira Devi at different times. The first poem was composed in New York on the occasion of the birthday of her dear friend, Miss Manda Oakes —in 1953. The second and third poem were also composed in America, each describing a deep mystic experience. The rest were composed in India and published in her *Shrutanjali*, now out of print.

THE SUPPLIANT

When buds wake, wafting fragrance,
Bees from afar will come.
When bulbuls thrill and warble,
The spring will laugh in bloom.

When rivers, singing, canter,
Into the deep they enter.
When moths bewail the darkness,
A flame will star the gloom.

Beloved ! I ache, forlorn, still
For thy advent in blind pain,
As the *chatak* waiting nightly
Dawn–clouds with their boon of rain.

My wistful eyes for thee
Keep vigil sleeplessly.
My life, O Love, is futile,
If thou concealed remain.

O hark to my prayer, Compassion !
Descend, reveal thy Face ;
Or tell me why my yearning
Still fails to attain thy Grace.

O thou, my soul's one kin
And King who callst, unseen
Mira to thee surrenders :
Make her thine own apace.

CELESTIAL MINSTREL

Sing, Sing thou, without pause, sing on !
Unslaked the thirst is in my heart.
My soul's, indeed, entranced and yet
My mind's still conscious of thine art.

Oh, how thy songs make heave my breast
With a nameless mystic ecstasy !
How they evoke, withal, deep down,
A sweet and sighing memory
And vanished trails of a sunken past
Accost with a fragrant wistfulness,
As the rhythms of thy haunting strains
Cradle my heart's in a deep caress.

So sing on, Love, sing ever on
Of themes divine, inviolate.
The world's athrill and yet 'encore'
Cries Mira's soul insatiate.
Yea, sing thou on and let not silence
Intervene nor, Friend, depart ;
My soul's, indeed, entranced and yet
My mind's still conscious of thine art.

The babblings of the brook and the koels'
Trills are wafted on the wind
And murmurs, echoing what thou singst,
To earthlings Beauty's message send.
Thine improvisings fare ever on
As the mountain-whiff that knows no wall ;
For once let's die to shadows here
Responding to the Gleam's own call.

Set all afire, set all afire !
For 'tis a fire that heals all pain :
Let the flame in me merge in the moon
And earthly ash on earth remain.
Sing on and on and let not silence
Intervene nor, Friend, depart :
My Soul's indeed entranced and yet
My mind's still conscious of thine art.

The pearls thou rainest as thou singst
Are culled by the breezes near and far
And, twinkling, they are sown in sky
Till every song breaks into a star !
When thou even croonest, flowers outpetal
And drink in what thy tunes outwell
And all eyes glisten with tears and hearts
Grow numb with a bliss ineffable.

Make flow thy songs and ring in Heaven's own
Nectar as rippling melody,
Only grant, Lord, may this I know :
Wherever thou art the world shall be.
Yea, sing ever on and let not silence
Intervene nor, Friend, depart :
My soul's indeed entranced and yet
My mind's still conscious of thine art.

SUPPLICATION

Leaving thy Brindaban bereaved,
Must thou fare far away ?
Beloved, couldst thou not yet awhile
Consent with us to stay ?

Were I the Jumna's purling waves :
When thou wouldst bathe therein.
I would babble, circling round thy feet,
In rapture, O Evergreen !

Were I a flute, upon thy lips
Of nectar would I hover
And, drawing my breath from thine, grow one
With thee, O dateless Lover !

Were I a koel, when thou wouldst, singing,
Graze thy cows afield,
How through my echoing trills thy songs'
Glory would be revealed !

Were I a pearl, how into a hundred
Pearls, Lord, would I break !
And, set in a garland, tremble on
Thine angel - envied neck.

But Mira is nor thy blessed flute
Nor koel, pearl nor stream :
And how could she, a pauper, reach
For thee, O starland's dream !

And yet perhaps some day wilt thou,
In compassion, lean to me,
When I shall still proclaim : " I live
And pine for none but thee. "

HEART-ACHE

The spring is reborn once again ...
hark how the koels sing !
But with whom shall I, friend, sport when absent
is my heart's one King ?

If He would only come, my Swain,
I should in beauty flower
And knit my blouse with silver moon's
own beams at this dream hour.

For my lips I'd pluck the tender smile
of the opening rose at morn
And rob the blue of stars at eve
my garland to adorn.

But alas, He's far away and the cool
of night like fire burns !
Oh, why stays He away from one
who only for him yearns ?

If He now came, Him I would hail
with my love's deepest boon
And my chaplet woven with dream-buds would
give Him, my night's one moon.

I'd bathe with tears of ecstasy
His twin feet travel-sore
And my life and soul shall be His throne
And altar evermore.

The spring's abroad ... wake longings but
... alas, who shall fulfil
My destiny — when He is far,
my Lord in woe and weal ?

If He came back to me, how would
I thrill and him address ?
Would I not be delirious with
delight to view His face ?

Would not my every limb become
His quivering flute of bliss ?
And my rapturous heart be burnt to dust
His dawn–rose feet to kiss ?

Oh, why ask, friend ? Behold ! the spring
is calling, but where is He ?
For whom shall I live if He will
come back no more to me ?

YEARNING

In the tranquil skies outspread the wings
Of his honeyed flute of harmony !
Inflaming all hearts how he sings
And maddens them to ecstasy !

Intoxicate, the damsels run,
Their anklets ringing in delight,
To vision him, the peerless Sun,
Who rends the ancient pall of Night !

The music's wafted on the wings
Of breeze, and Mira's heart, a thrill,
Responds to the call of the King of kings,
Her Lord on earth in woe and weal.

She sings : " O grant that I may seek
Refuge at thy twin dawn–rose feet
And may my lone life find the Unique,
The Deep, wherein all heart – streams meet. "

Our barren waste he comes to storm
With his rich assault of beauty and song :
The Formless wears the mask of Form :
For this the eyes of Mira long.

A whirl of fire his anklets shed
And yet 'tis not a fire that burns !
She dreads as the tongues of flame invade
And still in it to merge she yearns !

CELESTIAL CHAMELEON

The blue's own light, lo, crystallised
In a frail frame of alien clay !
A fragile bird of passage won
The clue to the Everlasting Day !

He comes, the great Guest, in our world's
Deep hour of need, in a mortal cast.
Only the blessed ones know Him :
A ruby sparkling in the dust !

Whenever the boat of earth is lashed
By Maya's waves in the oceaned Night,
Incognito, He comes, the Pilot,
To steer her home to the Haven of Light.

Some say — He's Ram; some call Him Krishna;
He is the Guru — some others claim;
He's Shiva, the Dancer — some announce;
Some chant — He's Uma, the Mother of Flame.

He's the holy Ganga — some aver;
Some hold — He's Radha, Beauty's Queen ;
But Mira sings : " All all art thou,
Here and hereafter — evergreen.

" In myriad forms thou comst to play,
Celestial Chameleon !
Fathomless are thy lilts and sheens :
All all is thy dominion.

" The sages vision thee in trance;
Prophets thy mandates come to proclaim ;
The saints thy glory promulgate
And kings build high shrines in thy Name.

Whoever has once surrendered, Lord,
Into thy hands his destiny,
Is ministered to by thyself:
The Divine obeys the devote!"

Mira, thy slave from age to age,
Appeals: "O thou unfailing Friend!
Come back once more: be born, Love, in
My midnight soul — her dark to end."

THE EVERLIVING

Why must my eyes still yearn for thee,
If thou reside, Lord, in the soul?
If thou be close to earth and life,
Why loomest thou as a phantom goal?

And yet thou throbst in every image,
On every censer thy flame glows,
In the restless honey-bee thou singest
And blushest in the opening rose.

Thou art the power of sceptred Kings
And the strength behind the mighty throng,
The answering fervour of aspirants
And contemplatives' vision and song.

On happy lips 'tis thy smile hovers,
In beauty's rainbow tears thou gleamst:
Thou blessest with thy peace and joy
And through the fire of pain redeemst.

Thou twinklest in the stars on high
And darklest in the deep abyss:
Thou art the lover and beloved
And passion's world-effacing kiss.

O artful Stealer of our hearts!
O Prince of light and loveliness:
Mira will stake her all to win
The last asylum of thy Grace.

THE GOPI AND THE MOTHER

"Mother Yashoda; your little Krishna
Is truly an imp, I claim.
He foments mischief everywhere,
Yea, lost to all sense of shame.

He is dark of face and dark's his mind
He was born in the darkest night
And yet, behold, the moon grows pale
Beside beauty's light!

He is full of wiles, a stealer of hearts,
No simple child is he!
With you and me he feigns to play,
While holding the eternity"

The Mother said: "To my son as the Lord
They bow, the devotees:
He knows what passes in every heart
Though none knows who He is.

The Saviour of the derelict, He's
The Beloved of all who love:
The Sustainer of the world has come
As the Guest of the world, from above.

He's One and Many, the Idol and altar
And the worshipper, too, is He!"
Smiles Mira: "O Mother, peerless is this
Thy Child of Eternity!"

JANMASHTAMI

(Birth of Krishna)

Hark, in Brindaban's carnival
The conchs all blow and bells all ring !
" Glory to our great Yashoda Queen,
A Prince is born ! " — they dance and sing !

Proud Yamuna babbles to the winds :
" I hewed a way in my breast aheave
For Him who, last night, from on high
Was sent — whom we must hail, receive. "

But the simple maids, beholding Him
In the cradle, smiling guilelessly,
Fail to divine that 'tis He rules
The spaces and eternity.

They know not — His frail arms can wield
The power dark demon-hordes to slay
Nor picture how His tiny feet
Once spanned the universe, in play,

Nor yet surmise — He'll grow to steal
All hearts and theirs and this world shall
Forget its load of cares when He
The worldlings with His Flute will call.

How can they guess — He is the King
And the Primal cause of all that is,
How know — all things that twinkle or shine
Derive their radiance from His ?

This, Queen Yasodha's truant child,
Is the Resident of Radha's heart,
At whose twin feet asylum seeks
Mira to play her humble part.

THE REASON

They ask : " For whom do you sing your songs
For ever, endlessly ?
Whether one harks or no — you go on
Pouring your melody ! "

For whom does the heart still brood and long,
Sweet koels warble the boughs among,
Blossom the buds in hues' display,
The rivers dance on — who can say ?

And yet they'll ask : " For whom do you sing
For ever, endlessly ?
Whether one harks or no — you go on
Pouring your melody ! "

For whom do bulbuls trill and trill
And plumaged peacocks sway, athrill,
The clouds, , sleep-walkers, saunter on
And priest winds fare from dusk to dawn ?

And yet they'll ask : " For whom do you sing
For ever, endlessly ?
Whether one harks or no — you go on
Pouring your melody ! "

For whom stays rapt in trance the saint,
Comes the artist spring our earth to paint ?
For whom do the skies, aflush, awake
And trees in laughter of green outbreak ?

And yet they'll ask : " For whom do you sing
For ever, endlessly ?
Whether one harks or no — you go on
Pouring your melody ! "

Why pines for the Lord His devotee,
Desolate — everlastingly ?
Why appeals the heart to the viewless star
And the ways of love are what they are ?

And yet they'll ask : " For whom do you sing
For ever, endlessly ?
Whether one harks or no — you go on
Pouring your melody ! "

THE DAY OF DAYS

Shall the marvellous day, Lord, ever break when
I'll lean on none but thee ?
When my fears and desires all gone, I, havened
At thy feet will be ?
When counting the fading stars, I'll wait
Thy Advent's golden Dawn ?
When, without thee, suns and moons shall loom
Like far orbs shadow-spun ?
When, a mendicant in thy Name, I will sing
The glory sleeplessly ?
Shall the marvellous day, Lord, ever break when
I will lean on none but thee ?

When, discarding the painted shells on the shore,
I shall plunge in thy oceaned Grace,
And every drop of my being mirror
Thy blue loveliness ?
When, rapt in thy Love, the lesser loves
Of the world I shall forget
And, versed in thy ways divine, no more
For our human ways will fret ?
When pain and joy and life and death
Will seem all one to me :
Shall the marvellous day, Lord, ever break when
I will lean on none but thee ?

Oh, when at a mere chance mention, Love,
Of thy Name my tears shall flow
And my mind and heart and breath perceive
Thy fragrance and thy glow?
Whether thou claim me or repel,
Consign me to doom or save:
I am thine, O my Salvation! asylum
At thy feet I crave.
Take all I have, all I surrender:
My owner unique thou be:
May the marvellous day now break, Lord, when
I will lean on none but thee.

NOSTALIA

I strain my eyes for one dear glimpse of thee.
From dawn to dusk I still gaze yearningly
On the far horizon : reveal thyself to me!

Clouds pour but in the rains : mine eyes for aye.
Without thee suns and moons no gleam display.
Oh, come Lord, come to light the derelict's way.

In myriad forms I see thy shadow vast,
But elusive like the moonbeams in rills glassed.
When wilt thou be mine own, Love, first and last?

Glory nor fame, wisdom nor youth is mine :
What can I offer at thy feet divine?
I have only installed thy Name in my heart's shrine.

GRACE RESISTLESS

The Grace of the Lord is fathomless, friend !
Sustains me ever His Grace :
Even as zephyr — around my life
Hovers His loveliness.

In my soul's lawn I have planted the seed
Of the last renunciation
And the tree is born fed by faith's sap,
With flowers as love's oblation

His Grace upheaves like clouds from earth
To descend in our eyes as tears
Wherewith I drench my heart and lo,
Comes spring outlawing all fears !

My life is a boat, His name the oar,
The pearls of vision invite,
And desires flicker like glow-worms' gleams,
For my guide is the Master's Light,

Mira is homesick and every night
To her seems long like a year :
But she knows her bark shall come to port,
For His Grace has come to steer.

IN ALL HUMILITY.

Refuge I seek, Lord, at thy door
In all humility:
Whatever I be – I am thy child
And everlastingly.

All merits thine : a cipher am I :
In the heart thou comst to abide.
I know not even the morrow's fate,
But in all thou dost preside.
Lead me by the hand to the Goal of goals :
In the maze I cannot see :
Refuge I seek, Lord, at thy door
In all humility.

I draw in pain my every breath
And stumble time and again :
I take one step and then fall back
How can I thee attain ?
Who but thyself can save — redeem
The darkness momently ?
Refuge I seek, Lord, at thy door
In all humility.

Who hold thee with the chain of Love
And call with the strength of thy Name,
To them thou, Master, must belong,
As the King his vassals can claim.
Knowledge nor prayer nor power I crave :
Reveal thyself to me.
Refuge I seek, Lord, at thy door
In all humility.

IDENTITY

I know not who or what I am :
How can I tell you, friend ?
'Tis a mystery I fail to solve,
A veil I cannot rend.

Sometimes I think I am His magic
Flute's own melody,
Or a dart released from His Name's bow,
Aimed at eternity.

Sometimes I feel I am a song
Sung by a devotee,
The victory a lover wins
By losing joyously.

But this I know : I am a nought,
All all in the world with Him is fraught.
I know not who or what I am :
How can I tell you, friend ?
'Tis a mystery I fail to solve,
A veil I cannot rend.

Sometimes I feel I am a tear
In His adorer's eye,
Or a firefly twinkling, beckoning
To a pilgrim of the sky :

Or a garland offered at His feet,
Where we our refuge claim,
Or a happy lyre's blessed string,
Resonant to his Name.

But this I know : I am a nought,
All all in the world with Him is fraught.
I know not who or what I am
How can I tell you, friend ?
'Tis a mystery I fail to solve,
A veil I cannot rend.

I am Mira, maid of Brindaban,
Proud Mevar's queen, they say.
Nay, dust am I of the feet of saints,
His attendant night and day :

Ever a plaything in His hands,
To His will I surrender :
On His Grace's branch I am a clinging
Creeper frail and tender.

But then I know : I am a nought,
All all in the world with Him is fraught.
I know not who or what I am,
How can I tell you, friend ?
'Tis a mystery I fail to solve,
A veil I cannot rend

THE WAY OF LOVE

O Soul, your pride eschew.
How will you learn to tread love's way
When you know not how to woo ?

Conning the scriptures evermore,
You, fool, but the dark blind alleys explore
'Tis not the oases they shall win
Who chimeras still pursue.

Why waste your days on vanities,
When every moment the shadows increase ?
In this world's welter the wasted years
No power can ever renew.

Whatever you seek — claim here and now,
Fill the heart with His Grace's golden glow,
May your love's own story in life now find
Fulfilment deep and true.

How long must you still vacillate ?
Sings Mira : " The hour is big with Fate."
" With renunciation's dart slay self " —
Hark, call the saints to you !

THE ACHE

" Lead me to the Goal, " I cry no more :
I ask for strength to tread the Way.
I crave not for thy boon of peace :
To be havened at thy feet I pray.

Grant : I may savour thy nectar of Grace,
Solvent of all that stands between,
And may thy Heaven's own gong ring out
The world's dark anarchy of din !

With thy Name's all-consuming Fire
My dross burn everlastingly.
May my love's longing wane no more,
Were even the air to cease to be.

I fear not pain nor joy desire,
Hope not for life nor death now dread.
Virtue and sin are one to me.
Ennui or zest for me are dead.

May I, Lord, deep-inebriate
With love, sing only of thy flame
In Brindaban from door to door,
A mendicant in thy dear Name.

They say : thou, World-sustainer, comst
To redeem our world in despond's Night :
My soul and world are steeped in gloom :
Flash thy resistless saviour Light !

THE CONDITION

Blessed art thou, O soul, to be born
May not thy days flow by in vain.
Remember—priceless is this life :
Aspire the Goal of goals to attain.

The Vedas are mere words if thou
Stay blind to His Starry secrecies.
The deep of love is rich with shining
Pearls of knowledge : dive, dive for these.

The austere disclaim the lure of pelf,
Yet miss the joy of harmony :
So sinks the ego-laden boat
The moment she puts out to sea.

The King broods on unhappy in
His royal palace and revelries :
The learned lecture on learning, alas,
Nor know in the heart repose or peace.

Temples can lead none to His Presence,
Nor floral offerings to His Grace :
Fulfilled are only those who serve Him
And can meet Him face to face,

Who, playing the lyres of their hearts,
Will sing of Him one-pointedly :
To them alone shall come the Lord,
A prisoner of His devotee.

SANGUINE

To my home He must come now, my Master,
To answer my call song–tender :
What I never could compass by striving,
I will — through my last surrender.

My eyes, drained dry now of tears,
No more like the clouds will rain.
I will meet my Beloved whose beauty
Shall appease my hunger and pain.
No more will I try my strength with
The One who my strength shall be,
And He'll come as my Guest, the faithful,
To abide for ever with me.

My soul will no more for Him ache now
My pinings and broodings cease :
For the smouldering fire of my yearning
He shall quench with His union's bliss.
None none will I hail as my darling
But the One who presides in my heart :
Hark, hark to His footfall — He's coming
And coming no more to depart.

He shall not stay far, the Elusive.
Sings Mira : " Hail, hail, my Love !
They have called thee ' compassionate ' for ages,
So this thou wilt have to prove."
Since I by myself am a cipher,
I will get all I want done by thee :
So come thou must to accept now
My love's hospitality.

THE LAST PRAYER

You humbled my pride, O Sweet!
And made me a pauper complete
But still will I say:
" Lord! come what may,
All all you have done and ordained
Is good for my soul, O Friend!

You robbed me of peace and delight
And plunged me deep in the Night
But still will I say:
" Lord! come what may,
All all you have done and ordained
Is good for my soul, O Friend!

I have lost my sleep and sigh,
By anguish impaled, I cry!
For your love what pain have I borne,
Joyless, hopeless, forlorn!
But still will I say:
" Lord! come what may,
All all you have done and ordained
Is good for my soul, O Friend!

Only one boon now I crave:
In my last hour, come to save!
Then may I repeat your name
And pray: " O Lord, me reclaim "
For the last time I say:
" Lord! come what may,
All all you have done and ordained
Is good for my soul, O Friend!

THE BOON OF BOONS

For ages, fool, you have sifted and weighed
And missed, alas, the clue to His will;
You counted the river's waves from the bank
And so your heart stays thirsty still.

You conned the Vedas, questioned scriptures,
And misread their pregnant messages :
For long you joyed in playing with words,
With the void to fill soul's emptiness !

The priceless years have vainly passed
And now the dusk looms on your road :
Because you only dallied and paltered,
You have missed the clue to His last Abode.

The stars and moons and suns have flashed
And warned you against the darkling doom :
But your eyes you never once opened and so
You are way-lost in your world of gloom !

Drowning in midstream, still you fancied —
Your boat of dream to the harbour had come :
You loved to revel in wayside inns
And so missed, alas, the clue to your Home !

The sleepy are tethered to their sleep,
The covetous to power and pelf,
The kings dote on their pomp and throne,
The pleasure-hunter on youth and self.

But Mira only aches for thee,
Thy vision and thine union :
Let those who will — seek lesser loves,
But she has staked her all for the One.

LOVE'S SECRET

Friend, shall I tell you how I wooed
And won the Lord I love ?
How He, for whom pine mighty saints,
Smiled on me, from above ?

I knew but one code, trod one path,
Alone to the Alone.
They worship Him as King of kings :
I claimed Him for my own.

The sages seek Him far and near
And still sigh unfulfilled :
I searched Him in my yearning heart
And there He stood revealed !

I conned no books—an alien
To high austerties.
I gladly hailed what He ordained :
My joys and miseries.

The learned fail to fathom Him,
The Vast and Mysteried :
He answered because to Him I called
My waylost soul to lead.

How can I, O friend, plumb His ways ?
Can a bird ever span the space ?
I only fell at His lotus-feet
And He gave me refuge, in Grace.

I cried for Him as cries for the mother
The infant in deep night,
And compelled, He leaned like sky to earth,
In love's divine delight.

ANSWERED

How far, O Pilot, is the port?
How far's the journey's end?
I ask and ask...but why dost thou
Not speak, my mystic Friend?

The daytides wane...blue shadows fall...
The shore recedes...I hear no call...
My life's lamp flickers...my bark is rocked...
When will this darkness end?
My heart beats fast...but still, alas,
Thou answerest not, my Friend!

The black clouds lour...my boat is frail...
Impends a storm?...Why hoist the sail?
Lo, waters swirl...but thou beginst
To play thy Flute, O Friend,
With a cryptic smile when I ask thee
How far still is the end?

I know but little...I only see
Thou takest in tow my destiny...
Whatever thou with ordain I'll hail
As best for me, in the end:
I give myself...make me thine own,
I'll ask no more, O Friend!

PROP

Thou wilt, Lord, some day, come to me,
In Grace and come to stay.
I lean on none but thee : thou wilt
Make me thine own, some day.

I'll take thy Name in every breath,
Count the hours, and sleeplessly
Will pluck the stars from sky at night
And a garland weave for thee.

With aspiration's blooms I'll deck
My heart's inviolate shrine
And kindle my soul's own lamps and blow
Love's conches hyaline.

With my doors all open, I'll wait, athrill,
Thy visit to my abode :
I lean on none but thee and pray :
Bear thou my life's deep load !

I'll cherish thy dream-flute in my heart
In wistful memory
And lest the dream break--my life shall
Become a dream of thee.

Disclaiming all who are dear to me,
To thy feet will I cling :
Let the world grow dim or me disown,
I'll adore but thee, my King !

Through cycles of birth I pined for thee :
Come now my thirst to slake :
I lean on none but thee, still vowed
For thee my all to stake.

I know not if thy union will
Fulfil me or erase :
I'll sing thy name everlastingly
To glimpse for once thy Face.

I yearn to be thy slave and sigh
For naught else here below.
I'll bear all pain for thee and hail
Whatever thou wilt bestow.

O Mira's Lord! assure me: thou
Wilt claim me for thy own:
I lean on none but thee on earth,
I live for thee alone.

THE RECKLESS

If you gave your heart to Him, O fool,
How dare you claim: "It is mine still!"
Can the soul, once given to Light, accept
To be ruled again by dark self-will?

Why must you waver or repine,
Knowing—he wins who stakes his all?
How shall he, who's afraid to lose,
Ever aspire to answer His call?

Palter no more: at His twin feet
Surrender all all you possess.
Who give with both hands are fulfilled:
Who guard their hoardings miss His Grace.

Sings Mira: "To Him hark back, O fool,
And not to the ego's promptings vain.
Or offer your head in your own hands,
Or stay away from Love's domain."

SENTINELS

We are India's sleepless sentinels,
Strength of her sinews, her heart's delight:
Jealous of her soul's inviolate honour,
Sons we remain to our Mother of might.

Our banner will flash in peace and war,
Truth's oriflamme, even as the morning star:
Our heads will not bend nor falter our feet,
Like gales we shall chase the hostile cloud:
Marching onward, dauntless, onward,
Death we will wrestle with brave and proud.

Comrades from birth with storms, we have played
With fires as though in a carnival:
Our hands have wielded the bow of lightning,
Power of the sun of courage we call.

Our banner will flash in peace and war......
Death we will wrestle with brave and proud.

Be strait the path or laughing with blooms,
We will to our goal we are vowed to attain
And for our Motherland we, her sons,
The jewels will wrest from the blue's domain.

Our banner will flash in peace and war......
Death we will wrestle with brave and proud.

JAI HIND

This life thou gav'st us, Holy Ind,
We will fulfil by serving thee
And, undismayed by hostile hordes,
Thy glory sing everlastingly.

False are the lovers who vaunt their love,
Unmeeting it on bended knees :
Vain are the darts that cleave the skies,
But in the end their targets miss.

O Mother of might ! we, thy true sons,
Are no weeping weaklings born in sin:
Great India's peak and plinth are we,
Her honour and pride, her soul serene.

Wherever thy beacon gleams, we'll hie,
Nor back to siren phantoms hark :
May the vibrant voice of Truth be ours
Whose radiance shall quell the dark.

May we, like moths, aspire to burn
And merge in thy love's mystic flame,
Our eyes still fastened on the Goal
And hearts on thine inviolate Name.

Dread Night's deep barricades trampling, we
Will march on forward dauntlessly,
Defying the iron laws of Doom
And the grim decrees of Destiny.

We'll sport with fire as with irised foams
And even as tempests pervade all :
We live for thee, O Mother ! and will
Die gladly, strongly—at thy call

INSISTENCE

With thee unglimpsed, shall yet another day
Flower and fade once more?
And this my longing heart still orphaned stay:
Desolate, homesick, sore?

If I fail to shed my pride, must thou remain
Withdrawn beyond the blue?
If maya's shroud I strive to rend in vain,
Thou'lt not come me to woo?

Wilt thou not see my love, Beloved, for thee,
Forgiving my flaws of night?
Knowest thou not how I ache sleeplessly,
Nor joy in life's delight?

If I am frail, be thou my strength: lead home
My soul—if I stray far:
Whatever I may be—I am thine: Love! come
To be my pilot star.

Pledged to thyself, to whom else shall I turn
But thee?—Make me thine own.
Say: how else shall I presume even to yearn
To call thee mine, O Lone!

Oh, shall my days pass everlastingly,
Hoping, pining in vain?
"But nay," sings Mira, "thou must come to me
To heal my agelong pain.

"How wouldst thou me renounce who, for thy sake,
Renounced my world for thine?
To one who to glimpse thy Face her all did stake
How couldst thou now decline

"To unveil thy Face? Shall yet another day
Flower and fade once more?
And this my longing heart still orphaned stay:
Desolate, homesick, sore?"

SAVIOUR

The boat is rocking ... swaying ... O my pilot, where art thou ?
O Saviour Pilot ! where art thou ?
I broke away from my dear moorings into the midstream now :
O Saviour Pilot ! come, come now !

My life's lone boat is small and frail :
How can she weather thunder and hail ?
When the waves around all dash, assailing her again and again ?
Oh, must I cry for thee in vain ?

How can I fight the winds that howl,
The rain that hisses, clouds that growl ?
Night is abroad and far thy Shore — I glimpse no trail of hope.
And in blind gloom, behold, I grope.

Leave not thy helm of Grace, O Friend !
Nor turn away thy Face in the end :
Beyond the Jumna lead my bark to thine own city of bliss :
Oh, steer me home to thy Haven of peace !

Sings Mira : " Hark, O Pilot, I pray :
'Tis thou sustainest the world, they say :
Then how canst thou decline to save
my boat at the mercy of Fate ?
O come—before it is too late. "

But nay : when thou art, how can I quail ?
With love's lamp lit, how can I wail ?
Rescue or doom me — I'll accept, Lord, only make me thine,
O everlasting comrade mine !

FULFILLED

My Love has come to abide with me
For ever ! O Friend, the bliss...the bliss !
In the ocean of life His Grace has steered
My dream boat into His haven of peace !

I sought Him in idols, temples, shrines,
Woods, hills and dales, alas, in vain !
With formal rites I worshipped Him
With lights and incense again and again :

But woe is me ! — never once I heard
His deep response to my lone cry :
Can ever a candle call to stars
And evoke an answer from the sky ?

I broke my bracelets — disclaimed all
I'd hugged : my kingdom, kin and home
And in every street — a mendicant
In His dear Name — I'd roam and roam

Till the saints revealed to me — how one
Must love the Lord one yearns to see,
And I sang : " I know I'm dark with flaws,
Still I'm thy child and cling to thee. "

So Mira, the derelict, He upraised
And gave asylum at His feet
When, lo, in a flash, the ages' chains
Fell off — as He came me to greet !

BRINDABAN

Farewell, our dismal vale of sighs and tears!
We'll wend to His far shore of blessedness.
Farewell, our heart–lost land of fogs and fears!
To acclaim His Brindaban of Gleam and Grace.

Fare far, still far from our domain
To His garden where springtide never can wane,
Beyond the clutch of din and pain,
We''ll leave our glooms for His haven
of Gleam and Grace.

Where only Love Divine holds sway,
Where none sustains defeat in play
And the Friend presides for whom all pray,
There we'll knock at His door of Gleam and Grace.

Where none says: "This is mine alone,"
Where woe or illusion is unknown
And children of Light the dark disown,
We'll learn there to love in His home
of Gleam and Grace.

"Hark, calls the Beloved," Mira sings,
"Playing the Flute, the King of kings!
"To Him, the Evergreen, on our wings!
"Give all we have to the Lord of Gleam and Grace!"

THE SUPREME DANCER

Behold the dancing Lord of Loveliness!
His anklets ring as alights the King
of Heaven the earth to bless!

Now Radha, beauty's paragon,
Chants with Krishna, in unison
Her golden bracelets tinkling
and the fountains answer athrill!

In ecstasy, the cuckoos sing,
The arbours beat time murmuring,
The Jumna purls and flowers of spring
their hearts of rapture reveal!

There whirls the Flutist, decked with blooms,
Aureate, crowned with peacock's plumes:
They race in joy, Brindaban's maids,
His choir of bliss to swell!

And Mira sings in a trance of love:
"He calls us all to His dream grove:
Run, run to the Jumna's bank beyond
our gloom — His Gleam to hail!"

HIS PLEDGE

The King of kings presides in my heart
And my loneliness heals with His viewless Grace.
To my sight, alas, is not given His glimpse
But my being is flush with His loveliness.

When I think He is far, my sad eyes fill,
When I feel Him close by His touch I'm stirred.
My ears still miss His anklets' ring
But my soul vibrates to His lilts unheard.

Love-bound, the dear bond how can I break
Or, disowned by all, disown Him in pain?
The Eternal Child with me plays as with sand
And builds and effaces me time and again.

No gifts are mine: wealth, talent nor fame:
He is my one dream, my joy, my pelf.
Sings Mira: "His love is hard to attain
Save by the ones who have exiled self."

TO KRISHNA, THE EVERGREEN

O thou indwelling all that is! O Soul of ecstasy!
Who com'st to earth to absolve our sins and nights of agony!
O peerless Friend and Lover of all! thy Grace now I implore!
Asylum of the derelict! I wait, Lord, at thy door.

Thy beauty, like a heavenly lotus, blooms our hearts to steal!
Upon the Jumna's bank thy dream dance sets the world athril!
O Gleam of gold, who playest thy flute of bliss everlastingly!
Hark, hark to my appeal, Beloved! I lean on none but thee.

Compassion is thy name, they say and so to thee I turned!
Why then must stay thou far away?
Have I not for thee yearned
From birth to birth — thy wistful eyes
still longing for thee, sweet!
Mira, thy slave in life and death, clings to thy dawn-rose feet.

THE ETERNAL COMPANION

He comes, O friend, He comes to me :
When none are there — steals in my Lord
to keep His Mira company.

When I'm alone— I'm not alone.
For at evetide, when the blue day dies,.
He comes, my eyes' unique dream-jewel,
To flash upon my ravished eyes,

And then in my heart's desolate shrine
Relumes His star-lamps silently :
He comes, my Lord does come to me.

When clouds of black despond enring
My way-lost pilgrim soul with Night,
He comes, Compassion's Moon, and floods
My darkness with His Beauty's Light.

And then on my forlorn heart-strings
Plays His immortal melody :
He comes, my Lord does come to me.

He comes to me, friend, day and night,
The one comrade of my life and death
And I'll sing on, from age to age,
Of His deep Grace with my last breath :

How He, the Lover, calls as Love
And thrills my soul everlastingly :
How He, my hord, still comes to me.

LOVE'S CALL

Soul! hark back: time flows by in vain!
What deep illusion makes you, fool,
Forget His Name again and again?

Even as fleeting rainbow dreams
Pass days and nights — ephemeral gleams!
Who ever has, with jewels untold,
A vanished hour wooed back again?
Remember momently His Name:
May not this life be lived in vain!

Will the wealth, you sleeplessly amassed,
Ransom you when you'll breathe your last?
Or all this pomp and pride avail
You in your farewell cry of pain?
You think in centuries — unknowing
What the morrow will ordain:

Sings Mira: "Listen to me, O soul!
These maya's joy–rides miss the Goal:
Whence, destitute, you hailed — there you
Shall go back, destitute, again
And who knows when the Gong will strike:
'Recall the fool who lived in vain!'

"Love alone can the world reclaim,
Nurse in your heart His Name's one Flame:
This quells our darkness here and lights
Hereafter the Way to His domain:
Who conquers self shall conquer all,
Who attains the Lord shall all attain."

THE VOW

One day, O Truant, come thou must:
One day thou'lt have to come to me.
Failing to stay away, thou shalt
Abide with me everlastingly.

I know my countless flaws and sins
Have weighed me down beyond recall:
But are thou not incarnate Grace
Who redeemest all who stray or fall?

Mercy's thy name, so how canst thou
Disclaim it sternly, ruthlessly?
I know, one day, Lord, come thou must;
One day thou'lt have to come to me.

Glory or pelf crave no more
Nor yearn for this world's happiness.
I only long for thee and cry
" Reveal but once to me thy Face."

The Love that wins to thee— that Love's
One boon give, I pray sleeplessly.
I know, one day, Lord, come thou must;
One day thou'lt have to come to me.

Learning nor strength I boast— the way
Of austerities to me's unknown:
My only wealth is thy sweet Name,
My only pride— I am thine own.

How wilt thou filch from me this pride,
Disown one who belongs to thee ?
I know, one day, Lord, come thou must :
One day thou'lt have to come to me.

How can I know or plumb thy Vast ?
I only know— thy breath's my breath,
My Master— thou, from age to age,
And I— thy slave, in life and death,

Thy plighted maid of Brindaban :
Redeem thy pledge— take me with thee.
I know, one day, Lord, come thou must :
One day thou'lt have to come to me.

They call thee— this our world's great King,
The Primal God, the One-in-all ;
But I, thy Mira, call thee mine
Heart-charmer, nonpareil Gopal.

I'm vowed to attain to thee— unveil
Thy Face of Love I live to see.
I know, one day, Lord, come thou must :
One day thou'lt have to come to me.

THE CLAIM

I will sing thy Name, yea, the Name will I sing.
O my life's one Goal, O my heart's one King!

On the Ganga's bank—far from the world's din,
Where the snow-range is kissed by star-light serene,
I will build a little, sweet temple of dream,
Adorned with flowers of beauty and gleam :
I will sing there thy Name, yea, thy Name will I sing,
O my life's one Goal, O my heart's one King!

There, far far away—where the world's clamour ends,
I will have none visit me, kinsmen or friends.
There only thy Name shall come me to woo :
Thy Mira, coloured with thine own hue
And there, all day, thy Name will I sing,
O my life's one Goal, O my heart's one King!

In that vale, on my green couch, 'neath the star's eyes,
I will drink in the breeze's lullabies
As, singing thy Name, soft sleep will me claim,
And I'll open my eyes, again, singing thy Name.
I will sing there thy Name, thy dear Name will I sing,
O my life's one Goal, O my heart's one King!

There thee with my love, I will so enfold,
That wherever I'll glance, but thee I'll behold.
My love, like a chain, will bind thee so fast,
How wilt thou escape ?— to me come you must
As pauselessly thy darling Name I will sing,
O my life's one Goal, O my heart's one King!

THE EVERLIVING

A time was— ah, those halcyon days,
When green was the earth and blue the sky,
When clouds gleamed, rainbows of bliss! Now, alas,
They but groan in pain and the lone winds sigh!

A time was when— in this our forlorn
Brindaban presided a fadeless spring,
When His love, like rain, would descend us to bless
And the Jumna, in ecstasy, sing and sing!

I still, friend, recall how at sunrise we all
Would run to His river our pitchers to fill
And how, as our bangles we tinkled to beckon,
He would hie to our tryst our wan hearts to thrill!

Then how He would ravish our souls with His love
And our eyes with His beauty— again and again!
How the dawns would break, a-quiver with hope!
But now our days and nights pass in vain!

Oh! whither have flown those marvellous hours?
And where are that love's romance and thrills?
Our world of clamour and self has repealed
The song that redeems and the love that fulfils!

Our Jumna still purls on the same and our meads
The same blooms bear— our Lord is the same:
'Tis we who have changed with our hearts grown old,
So the love that entranced how can we reclaim?

On the shore of mind's troubled ocean we raise
Toy-houses with shells and pebbles of thought
The heart still murmurs: "Build not on sand!"
But we, fool dupes of desire, heed not!

Hark, hark: there anew, friend, He plays His haunting
Flutelet of Flame in His Grove evergreen!
Behold: how He calls and calls to us all:
The unique, inviolate, tender, serene!

Come come : we will people His City of Bliss
And, inarmed in His love, of His one love sing
Then, crowned by His love's own mandate, remould
Love's kingdom on earth, with Him for our King!

O Mira's Beloved Supreme! to thy feet
She returns now in rapture to hymn once again
Thy miracle Name that still resurrects
The days that were dead and hopes that were slain!

THE ATTAINMENT

I have attained to Him at last,
My dream Beloved I have attained!
The One adored of sages and saints,
Whom few can even glimpse— I've gained!

I bartered away my heart and soul
To win His Grace, life's gleaming goal :
And bound Him with love's chain so strong
No power on earth could hurt or rend!

To sin nor virtue I belong,
Nor to the world of right and wrong :
I but opened my heart's temple-door
And in came my Everlasting Friend!

Some say : " He is our Lord Supreme,
The Deliverer, Pilot— pray to Him "
I sing : " He with His loveliness
Has us, in life and death, sustained."

O Bliss, bedecked with fadeless blooms!
Evergreen, crowned with peacock's plumes!
Whose anklets ring all hearts to thrill
And Flutelet sings all pain to end!

O Nonpareil, my All-in-all!
Whom Mira calls her own Gopal!
Thy maid and slave from birth to birth,
I can on none but thee depend.

THE CERTITUDE

Come thou, O Lord! come, come to me.
When shadows fall— my lone soul flush
With thy sun-love everlastingly.

My songs ring out but one refrain:
" Win thee I must, O Evergreen! "
How can life's little rivers slake
My yearning for thy Deep serene?

In the world's distracting din—may I
Not miss thy love's call to the Goal:
I've improvised on myriad themes,
I'll hymn now thee alone, my Soul!
The Flute thou playedst to ravish this
My heart—play on everlastingly:
Come thou, O Lord! come, come to me.

Honour and insult are one to me,
Nor glooms in the guise of gleams mislead,
No helpmate smiles nor foeman frowns,
The illusion of "I and mine" is dead.

I've overpassed the night of pain,
Nor have thy blissful New Dawn seen,
Deliverance I crave no more,
Nor shun this world as a way-side inn.
Now I ache for the Eye or Light to behold
In all thy Face everlastingly:
Come thou O Lord! come, come to me.

O Mira's one Beloved! I know:
One day thou'lt come me to caress
And I shall not sink in the Abyss,
But climb to thy Peak of Blessedness.

And so for aeons will I wait
Till thou, some day, thyself reveal,
One who calls none but thee her own,
Thou shalt make thine own to fulfil,
Compassion is thy Name—its pledge
Redeem thou must everlastingly:
Come thou, O Lord! come, come to me.

THE CONVERSION

I gazed, unappeased, on my Lord, friend,
I gazed on Him longingly,
And the world dissolved as I marvelled
At the miracle : could it be He?

One day, in the woodland, at sunset,
While strolling, I found my Love,
A Vision of bliss and beauty,
In a flowering *Kadamba* grove!

Entranced, I drank in the nectar
Of His lavish loveliness :
A picture of Grace Supernal,
Incarnate, our eyes to bless:

Then, tenderly smiling, He raised His
Flame-Flute to His dawn-rose lips
And spilled strains of celestial rapture
All terrestrial joy to eclipse!

Then, Oh, how the melodies gyred
All round me, like lightnings of thrill!
How the insentient things all quivered
And sentient things stood still!

Thereafter He started dancing,
And as He, my All-in-all,
Whirled round— all Nature applauded
The Elysian Festival!

The world's sorrows now seemed unreal,
Dark Fate's decrees were repealed:
Our earth was lifted to Heaven
As Heaven to earth was revealed!

On our Brindaban now descended
A transcendental Gleam:
I lost count of the fleeting hours,
Oblivious of all but Him!

Then, lastly, to Him I surrendered
My all— impelled by His call
And when I was left with nothing,
I found, lo, I had won all!

When all I had owned I disowned, friend,
And cried: "Thy slave I would be,"
As His playmate He claimed me, Mira,
Now His own, everlastingly!

IMMINENT

My one Beloved'll come now, friend !
He's pledged to come tonight
My ache of ages to absolve
With His all-healing Light !

Behold the spring's come in advance !
The boughs, in flower, applaud and dance !
Papihas, cuckoos, peacocks— all
Acclaim Him in delight !
My one Beloved'll come now, friend !
He's pledged to come tonight.

The twinkling morning-stars all sing :
" He'll come tonight— our Moon and King ! "
To winter's pain sweet zephyrs croon :
" His vernal troth He'll plight ! "
My one Beloved'll come now, friend !
He's pledged to come tonight,

Lo ! how the sunbeams chase on high
The fleeting shadows and chant : " He's nigh ! "
Illumined is my heart's dark shrine !
Blow conchs : " He heaves in sight ! "
My one Beloved'll come now, friend !
He's pledged to come tonight.

Sings Mira : " Hark : how hauntingly
His Flame-Flute calls ! In answer we
Will woo Him so that come He must,
In beauty and Bliss bedight.
My one Beloved'll come now, friend !
He's pledged to come tonight.

My chains shall bind me nevermore :
I've opened wide my temple-door :
Surrendering my all— as my
Life's Lord Him I'll invite.
My one Beloved'll come now, friend !
He's pledged to come tonight.

THE ETERNAL CITY

Let's wend to His Eternal City of bliss :
Farewell, our world of dark and strife and din !
We will to His fadeless bower of Brindaban
Where He presides, our Lord, the Evergreen.

Where none is greater deemed than his compeers
And the rich and poor share in His equal Grace,
Where none's a foeman — none an alien :
For all are His own, reclaimed by blessedness.

Where love's blue Jumna, purling, ripples on
And all, love's children, live in love's delight,
Where love's zephyr makes flower all buds of hope
And boughs, in love's thrill, dance all day and night.

Where one desire sets every heart aflame :
To be coloured by His love-lit rapture's hue ;
Where duality is slain and fears repealed
And in love's rhythm all learn the Beloved to woo.

Sings Mira : "Come, friends ! we'll untrammelled fare
To His dream grove where He His love's flute plays,
Missioned to heal our ancient desolate pain
By His all-absolving wizard loveliness.

" Hark : He with beauty crowned, in lightning robed,
Breaks forth in song to redeem our vale of sighs
And, calling in love, our love's one answer waits :
Begone, old Night ! we will to His new Sunrise ! "

CALL AND ANSWER

MIRA :

How, Gopal, thou madst Mira burn in helpless love for thee :
My throne and Kingdom I forgot for thee everlastingly :
Oh, how thy Flute's resistless call
Came this my life and soul to enthrall :
Sundered from thee, I am a husk : Beloved : fulfil thou me
Who left her throne and kingdom for thee everlastingly.

GOPAL :

How, Mira, thou calledst me in world-oblivious ecstacy,
And madst me, helpless in my love, to come to abide with thee :
How resistlessly thou sangst my name
And yearnedst, in love, my love to claim :
And so I could not stay away : behold, I'm come for thee
Who madst me, hlpeless in my love, sing : "Beloved, be thou with me"

MIRA :

How, Gopal, thou madst Mira burn in helpless love for thee :
I broke my bonds of fear and shame : thy love has made me free.
In tears of love, I cry— appeal :
Beloved : to me thy love reveal :
I sing, in love : my all I will surrender, Lord, to thee.
I broke my bonds of fear and shame : thy love has made me free.

GOPAL :

How, Mira, thou calledst me in world-oblivious ecstasy :
My conch and discus I have left to play my flute for thee.
In love I come as the darling of earth,
In love as a mortal I seek birth,
I woo thee as thine own Gopal in love's moon-minstrelsy,
My conch and discus I have left to play my flute for thee.

When night relumes her silver lamp
And lovelit blossoms spray the sky,
When moonbeams weave the earth's dream robe
And clouds on coloured wings roll by :

When darkness floats on velvet waves
And silence rings her soothing hour,
A shadow play becomes the earth,
A sentinel each lovely bower.

All weary brows are sleep-caressed
And lonesome hearts are peaceful too,
In the mystic stillness of my soul
A prayer awakens, friend, for you :

May you remain Love's constant flame
That burns alone for Him, dear Maud !
All hope and joy, all strife and pain
May bring you closer to your God.

*

In this land of fear and heart-aches,
Where mighty titans reign,
Like fireflies come the sages
To unfurl Love's wings in vain.

In this land of strife and suffering,
Where Falsehood's trumpets blow,
Fare, friend, beyond the Darkness,
Where love and nectar flow.

Men sow here seeds of sorrow,
Crave joy but cling to pain :
Today they lose... and tomorrow
Is but yesterday's refrain.

*

Poised on the crest of silence,
I saw life's dreams in flight
And beheld the clamouring thoughts race
In and out of sight.

Who ever knows whence and whither ?
A highway was the mind :
Some streamed in — firm, possessive,
Some stumbled — groping, blind.

Then flashed the conscious signal
And barred the way to all,
Unheeding hostile whispers
Of yearnings great and small.

When all was still and empty,
No joys or sorrows trod :
In stole a mighty stranger,
One lonely thought of God.

*

I have the power to hew from pain
The mould of ecstasy :
A little ripple on life's waves
Yet I do claim the sea.

I have the courage to scan the sky
With frail half-opened wings,
To own the blue and taste the joy
The vast Infinity brings.

A tender petal of life's rose.
I shiver with every breeze,
Yet flows in my veins the nectarous sap
Of Love's eternal trees.

A whispering hope in a pining heart,
A hush before the dawn,
I have the strength to break pain's night
And claim the heavenly morn.

*

Like a crumpled rose in thoughtless hands,
In pain's dark grip she lay,
And saw cold shadows hover around
As goblins at mock play.

She saw the pale grim Seer of death
Austere, detached and calm.
She almost felt his icy breath
And heard life's farewell psalm,

All fears, desires and duties fell.
Far smiled the Freedom's morn.
One lonely prayer now claimed her heart :
" My Lord, Thy will be done.

" At the dawn of joy, in the night of pain.
O Guru, my stay and guide,
I, thy child, know none, none but thee
O Friend, with me abide. "

*

I will wait for you as the evening falls
My Lord, I will wait for you.
I know you will come as the flutelet calls,
My heart you will come to woo.
I will call to you at the break of dawn,
My Love, I will call to you
In my heart come, Lord, as the light is born,
My dreams will then come true.

*

Sometimes, O friend, when I am pining,
Sometimes, when all looks dark and dry,
Strangely, I see a silver lining :
The darkest hours, I feel, roll by.
Somewhere I know the light is shining,
Though night is dark and long with pain.
My heart still feels a silver lining,
I know thy dawn will come again.

*

When day is done, and shadows fall
Let this my prayer be :
O make my life a tender flame
That only burns for thee.
O make my speech one grateful hymn,
My heart of love Thy throne.
My joy, my thought, my Love, my life
Make all, O Lord, Thine own.

*

In the shadows of my life, you bring to me
Just a light that I may see and cleave to thee,
Just a hint— that I am Thine,
Thus I feel your love Divine.
In the brightness of the noon you bring to me
Just a shadow that calls back to memory,
Just a hint— 'tis, Lord, your light
Now makes this life so bright.

I know not why— but when I am alone
A sigh so gently leaves my soul for thee!
An answering call then echoes to my own
Thus, Love, I know that you are close to me.
I know not how— but when day's friends depart
And lonesome shadows linger dark and wide,
A flower-like flame then steals into my heart,
Thus, Lord, I see that you are by my side.

*

From far away beyond thy reach, O mind!
On wings of love she comes to this dark land.
My heart reveals its petals to her gaze:
Enfolding all I am she seeks my hand.
Swiftly we cross the pale of your horizon,
On murmuring waves of soft delight we roam
Where silence whispers and where stillness flows,
Where all is Love, my soul is there at home.

*

Away on the shores of memory,
Deep in the depths of my heart
Love's peerless pearl of Eternity
Sighs: "Take me ere you depart".
Men playing with waves of illusion
On Time's speed-boat move on:
When caught in the reefs of delusion
They look...and the sigh is gone.

*

What love is this that asks for no return?
What joy that joys alone to give?
What soothing flame that burns to heal each burn?
Who bears His cross that I may live?
Whose Grace is this that comes in pain's disguise
To lash and wake this soul of mine?
Who in His mercy leans that I may rise?
Is He the Friend men call Divine?

In the silent cadence of night's moving hour,
When sleep carresses every care-worn brow :
There blossoms a flower-like dream in my heart's bower,
A fragrant form takes shape I know not how.
A sweet sadness shimmers in her starry eyes,
Her lips like rose-buds bloom into a smile :
Pure as a lily, a radiant dawn from skies,
Comes my love to make dreams real for a while.

*

O Minstrel, when I hear your music's strain,
My yearning heart heaves to your melody,
Love's bow moves on the heart-strings in refrain..
I long to come, I feel you call to me.
But when, O Lord, I hear your mystic flute,
An ecstacy strains my heart to tender pain...
Time is still, and even the breeze takes root :
O Minstrel, won't you play your flute again?

*

In mind's blind alleys, in heart's domain
O Lord be Thou my guide.
Take not my sorrow, my strife, my pain,
But take away my pride.
When the soul is rushed by life's high tide
To the ego's whirling deep,
Be Thou my stay, with me abide
In life and lasting sleep.

*

If in life's eve, love's moon, you come to call
And steeped in illusion deaf my ears be,
With Thy thunder, O Lord, break my little wall,
But leave me not—for I belong to Thee.
If in night's hush, love's dawn, you come again
And in blind sleep my eyes droop heavily,
O Compassionate, wake me with light's lash of pain,
But leave me not—for I belong to Thee.

Somewhere in the dark night a star was lost :
One little star in the star-speckled sky :
Its little light, clung, quivering, for its life,
Like a hope it twinkled, then swooned like a sigh.

Somewhere in the dim heart a hope was lost :
One little hope in the grim swirl of strife.
A whispering truth, it clamoured for its right,
It struggled...but the storms soon quenched its life.

Somewhere in the wide world a life was lost :
One little song was hushed before its hour :
One star, one hope, one life—the world forgot :
The Creator smiled : "But these I made to flower."

*

O Boatman, wont you take me across,
Take me across the river ?
Heavy my load, my mind's at a loss,
What can one give to the Giver ?

A love-lit faith or a thankful prayer
Is all that belongs to me :
Wont you accept this as your fare
And take me along with thee ?

Stormy the night and weary my heart,
For long I have stood on the shore ;
Unfurl the sails, from the land depart :
Take me, I can wait no more.

*

When night is nigh and sunbeams part,
How weary grows at eve my heart!
In vain is lost another day
And still, my Love stayed away!

A new hope shines with each new star,
The twilight murmurs—you are not far,
A dawn will follow the darkest hour:
You'll blossom in my heart's lonely bower.

*

The pearly stars, the silver moon,
The golden dawn I see:
The dew-kissed shyly-blushing rose,
The courting bumble bee;
The blue-bells swaying in the breeze,
The meadows' emerald green;
The mighty peak of a distant hill,
Like a lonesome haughty queen!

In pride the angry clouds roll by,
Then with humble hearts they bow:
I see thy cosmic shadow-play,
But Beloved, where art Thou?
The sky leans down to meet the earth,
Deeps greet the virgin brook;
Soft slumber soothes each weary brow,
Hope blooms in every look.

Spring answers the eager calling bird,
Fulfilling every tree...
But my lone heart is yearning still...
For Beloved, I see not Thee.

*

DADA WE BOW TO

Hail, O heavenly minstrel, hail, we bow to thee !
O thou roseate dawn of love's deep ecstasy !
Hail, O son of Light, we earthlings bow to thee !
Lean to us, ethereal friend, our pilot be.

Sing, O Bard of Brindaban, of thy Gopal :
He who plays His haunting flute through thy love's call.
Sing again of the Blue's domain, O song-bird free !
Build a bridge 'tween us and the sky of melody !

Leave us not in bondage, Friend, for we are thine.
Set our hearts aflame ! Oh, let our love now shine !
Give that we may learn to love and live like thee !
Be our guide and stay, for ever our Master be !

January 22, 1958. —INDIRA.

DILIP KUMAR ROY'S

Among The Great—(Conversations with Romain Rolland, Mahatma Gandhi, Bertrand Russell, Rabindranath Tagore and Sri Aurobindo along with their letters to Dilip Kumar. Foreword by Sir Sarvapalli Radhakrishnan. Third popular edition, printed 50000 copies in New York. The conversations were revised and approved of individually by the five celebrities. Jaico Publishing House, 125 Mahatma Gandhi Road, Bombay 1) ... Rs. 2.

The Subhash I Knew—(Dilip Kumar reminiscences on his friend, philosopher and guide, the great Netaji, with Netaji's photographs and letters. Nalanda Publication, Bombay) ... Rs. 5·25.

Fall of Mevar—(Translated from the original Bengali drama of Dwijendra Lall Roy, one of the greatest dramatists of modern India, highly praised by Pandit Nehru: "*Very powerful and moving.*" Second edition. Bharatiya Vidya Bhavan, Chaupaty Road, Bombay). ... ... Rs. 2

Kumbha — India's Ageless Festival—(Account of the Sadhus of India of the present and past — with illustrations and talks of the Yogis and Saints. Foreword by K. M. Munshi) ... ... Rs. 2

Beggar Princess—(A drama in Five Acts depicting the life of Mira, the great Queen-Saint of Mevar. Foreword by Sir C. P. Ramswami Aiyar. Tribute by His Holiness Ramdas, Dr. James Cousins and others. Written with Indira Devi's collaboration. Kitab Mahal, 56/A Zero Road, Allahabad) ... Rs. 3.

Sri Chaitanya—(Drama in Three Acts in blank verse. Introduction by Sri Aurobindo. Praised by T. S. Elliot) ... Rs. 2·25.

Sri Aurobindo Came To Me—(Dilip Kumar reminiscences about Sri Aurobindo a great number of whose letters, philosophical as well as humorous, are given in full. Sri Aurobindo Ashram, Pondichery) ... ... Rs. 6.

Deliverance—(Translated from the original Bangali novel of Sarat Chandra Chatterji, the greatest novelist of modern India, praised by Romain Rolland, Tagore, Radhakrishnan, Sri Aurobindo and others. Foreword by Rabindranath Tagore. Reader's Corner, 5 Sankar Ghosh Lane, Calcutta-6) ... Rs. 3